www.thearyasamaj.org

ओ३म्

संश्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि
परोपकारिणी
दयानन्दसरस्वती

पाक्षिक परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५४ अंक - २४ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र दिसम्बर (द्वितीय) २०१३

महर्षि दयानन्द सरस्वती ब्रह्मचारी रामानन्द
सन-१८२४ - सन-१८८३ शिष्य

www.thearyasamaj.org

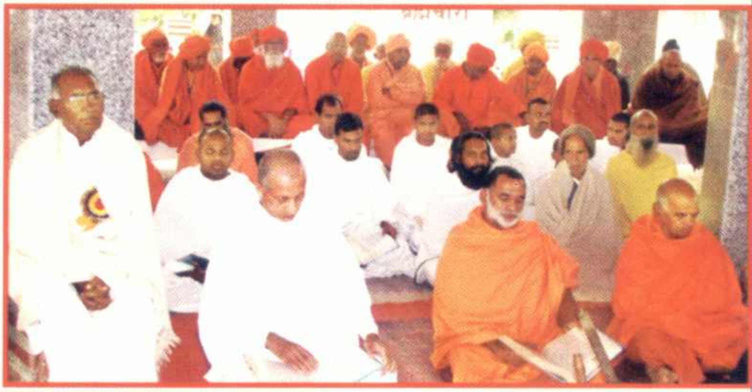

ऋषि मेला २०१३

झलकियाँ

www.thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५४ **अंक :** २४
दयानन्दाब्द: १८९
विक्रम संवत्: पौष कृष्ण, २०७०
कलि संवत्: ५११४
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११४

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२११७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

दिसम्बर द्वितीय २०१३

अनुक्रम

१. सिद्धान्त हीनता पतन का कारण है	सम्पादकीय	०४
२. सत्वपुरुषान्यताख्याति	स्वामी विष्वङ्	०६
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	०९
४. वैदिक साहित्य में सात संख्या	विरजानन्द दैवकरणी	१२
५. भू: भुव: स्व:	महात्मा चैतन्यमुनि	१४
६. वेद एवं ऋषि ग्रन्थों में समग्र.....	उमाकान्त उपाध्याय	१८
७. उपनयन संस्कार क्यों करायें?	कन्हैयालाल आर्य	२४
८. भारतीय संस्कृति में ऋत व सत्य	ब्र. राजेन्द्रार्य:	२८
९. पुस्तक - समीक्षा	देवमुनि	३१
१०. विधर्मियों के प्रश्न व स्वामी दर्शनानन्द जी के उत्तर		३२
११. जिज्ञासा समाधान-५३	आचार्य सोमदेव	३५
१२. संस्था-समाचार		३७
१३. आर्यजगत् के समाचार		४०

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

www.thearyasamaj.org

सिद्धान्त हीनता पतन का कारण है

आर्यसमाज की विशेषता यदि कोई है तो वह है सिद्धान्त की दृढ़ता। जहाँ आर्यसमाज का विचार पक्ष स्पष्ट एवं सत्य पर आधारित है वहीं इसके स्वीकार करने वालों की सिद्धान्त निष्ठा संगठन को दृढ़ता प्रदान करने वाली है। यही व्यक्तिगत तथा सामाजिक दृढ़ता संगठन को सफल बनाती है। आजकल सिद्धान्त निष्ठा पूर्व की अपेक्षा शिथिल हो रही है। यह समाज की घटित घटनाओं से स्पष्ट होता है। गत दिनों आर्य समाज की बड़ी प्रतिष्ठित संस्था में जाने का अवसर मिला। इस संस्था के संस्थापक स्वनामधन्य वीतराग स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज थे। इस संस्था ने आर्यसमाज को स्वामी ध्रुवानन्द और पं. शिवकुमार शास्त्री जैसे अनेकों विद्वान् प्रचारक दिये। वह संस्था साधु आश्रम, अलीगढ़ है। संस्था को स्थापित हुए एक सौ वर्षों से भी अधिक समय व्यतीत हो चुका है। विगत दिनों १२, १३, १४ नवम्बर २०१३ को संस्था का १०३वाँ वार्षिक महोत्सव आयोजित किया गया था। संस्था के अधिकारियों की कृपा से वहाँ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जाने का जितना उत्साह था कार्यक्रम की दशा उतनी निराशाजनक थी। यह किसी आर्य संस्था का उत्सव न होकर राजनीतिक दल की रैली थी। इसमें वह सब हुआ जो राजनैतिक दल करते हैं, जिनका संस्था के सिद्धान्त से कोई सम्बन्ध नहीं होता। सारा पण्डाल राष्ट्रीय लोकदल के झण्डों से, लेखों से पटा हुआ था। दो चार ओ३म् के झण्डे बीच-बीच में लगे अवश्य थे। उत्सव के दूसरे दिन राष्ट्रीय लोक दल के अध्यक्ष अजीतसिंह वहाँ आये, उन्होंने वहाँ अपनी राजनीतिक सभा की। उसमें अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के लोगों की लोकदल की सदस्यता लेने की घोषणा हुई। जाट सभा, ब्राह्मण सभा आदि की ओर से अध्यक्ष का सम्मान किया गया। मथुरा से आये लोकदल के नेता ने गिरिराज महाराज की जय के घोष लगाये। उस पूरे कार्यक्रम में संस्था, समाज, सिद्धान्त के लाभ या उन्नति की कोई चर्चा नहीं थी। ऐसी सभाओं में, ऐसा ही होता है। जब विद्यालय के आचार्यों से इस विषय की चर्चा की तो उन्होंने प्रबन्धकों की इच्छा कहकर अपना पीछा छुड़ा लिया और प्रबन्धकों से पूछने पर पता लगा एक विधानसभा के सदस्य ने १५ लाख रुपये व्यय करके संस्था के मुख्य द्वार का निर्माण कराया है, उनकी प्रसन्नता के लिए संस्था ने उनको यह सुविधा प्रदान की है।

इसमें हमें ध्यान रखना चाहिए कि सामाजिक संस्थायें किसी दल या सरकार के विचारों से नहीं चलती, वे अपने विचारों, सिद्धान्तों व आदर्शों से चलती हैं। जब ये संस्थायें आदर्श को छोड़ देती हैं तो पथभ्रष्ट और दिग्भ्रमित हो जाती हैं। यदि आज संस्था में लोकदल के अध्यक्ष के आने पर दल के झण्डे लगाये जायेंगे तो कल समाजवादी, बहुजन समाज, कांग्रेस के व्यक्ति आयेंगे, तो क्या संस्था उनके झण्डे लगायेगी। संस्था सब की है, कोई भी आ सकता है। कोई भी सहयोग कर सकता है परन्तु संस्था अपने नियम व सिद्धान्त बदलने के लिए बाध्य नहीं है। ऐसा करने पर ऐसी संस्थायें अपने उद्देश्य से विमुख हो जाती हैं। इस कार्यक्रम को देखते हुए इतिहास के दो-तीन प्रसंग स्मरण हो आये जिनसे भूत व वर्तमान की तुलना की जा सकती है।

घटना २२ नवम्बर १९३० की है। इसकी चर्चा प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु लिखित महात्मा नारायण स्वामी जी के जीवन में आती है। दिल्ली से हरिद्वार जाते हुए ज्वालापुर से पहले एक गाँव आता है बहादराबाद। उस समय तो यह गाँव बहुत छोटा रहा होगा। अंग्रेजी शासन का समय था। एक अंग्रेज जिसका नाम कप्तान गफ़ था, उसने सत्ता के घमण्ड में आकर अपने कुछ सैनिकों को लेकर आर्यसमाज मन्दिर पर धावा बोल दिया और आर्यसमाज मन्दिर पर लहरा रही ध्वजा को उतार दिया और आर्यसमाज के उपमन्त्री रामलाल को बहुत पीटा। परन्तु आर्यवीर रामलाल कप्तान से दबे नहीं और आपने यह सूचना सार्वदेशिक सभा को दी। आर्यसमाज की पत्र-पत्रिकाओं में इस दुर्घटना का समाचार छपा। महात्मा नारायण स्वामी जी ने तत्काल सरकारी अधिकारियों तथा वायसराय को तार द्वारा इस घटना की जानकारी दी और संगठन की ओर से विरोध व्यक्त किया। सारे आर्यसमाज में रोष व्याप्त हो गया। आर्यों के आन्दोलन को देखकर अंग्रेज सरकार को झुकना पड़ा। ठा. मशालसिंह जी द्वारा महात्मा नारायण स्वामी, रामलाल जी, गंगाराम जी देहली, पं. रासबिहारी जी लखनऊ को आमन्त्रित किया गया। ये सब लोग १४ अगस्त १९३१ को नैनीताल पहुँचे। ठा. मशालसिंह के साथ प्रान्तीय सरकार के मुख्य सचिव जगदीश प्रसाद के कार्यालय में सरकार के अधिकारियों से मिले। जिस में प्रधान सेनापति सी.आई. सी. की ओर से कर्नल ग्रेटन उपस्थित थे। इस कार्यालय में आर्य समाज के प्रतिनिधि मण्डल से कप्तान गफ़ को अपने कृत्य के लिए क्षमा माँगनी पड़ी। रामलाल जी से तो गफ़ को लिखित क्षमा माँगनी पड़ी और दो सौ रुपये भी देने पड़े। कप्तान ने प्रतिनिधि मण्डल के प्रत्येक सदस्य से हाथ मिलाकर दुर्घटना के लिए खेद व्यक्त किया तथा मुख्य सचिव ने शुद्ध खादी से बने थैले में ओम् ध्वज को

www.thearyasamaj.org

रखकर महात्मा नारायण स्वामी जी को आदर से भेंट किया। वहाँ से लौटकर १८ अक्टूबर १९३१ को आर्यसमाज मन्दिर में बड़े यज्ञ का आयोजन किया गया और समारोह पूर्वक आर्यसमाज मन्दिर पर फिर से ध्वजा को फहराया गया।

दूसरी घटना १९५९ की है जो स्वामी विद्यानन्द जी की आत्मकथा खट्टी-मिट्ठी यादें पुस्तक में दी गई है। आपने लिखा है उस वर्ष परम्परा के अनुसार गणतन्त्र दिवस के अवसर पर कॉलेज में राष्ट्रीय ध्वज फहराया जाना था। दूसरी ओर कॉलेज के हॉल पर सदा की भाँति ओ३म् ध्वज लहरा रहा था। उस समय एन.सी.सी. के अधिकारी ने आपत्ति की कि राष्ट्रीय ध्वज से ऊपर कोई ध्वज नहीं फहराया जा सकता। इसलिये पहले ओम् की ध्वजा को उतारा जाय। इस पर स्वामी विद्यानन्द जी- जो उस समय आर्य कॉलेज पानीपत के प्रिन्सिपल होते थे- आपने कहा- यह नियम राजनीतिक व साम्प्रदायिक झण्डों पर लागू होते हैं। ओम् के झण्डे पर यह नियम लागू नहीं होता। यह ओम् ध्वज संसार के सभी झण्डों से ऊपर है। अत: किसी भी अवस्था में ओ३म् का झण्डा भवन से उतारा नहीं जायेगा। इस पर एन.सी.सी. अधिकारी नाराज होकर अपनी वर्दी उतार कर एक ओर खड़े हो गये और आर्यसमाज के प्रधान श्री जयभगवान् दास जी ने राष्ट्रीय ध्वज को विधिवत् फहरा दिया।

इस घटना को लेकर पानीपत के कुछ कांग्रेसियों ने इसको विकृत कर सरकार से शिकायत कर दी। दीक्षित जी को इसका पता तब लगा जब वे तत्कालीन पंजाब के राज्यपाल नरहरि विष्णु गाडगिल को अपने यहाँ दीक्षान्त समारोह के लिए निमन्त्रित करने गये। तब राज्यपाल ने दीक्षित जी को कहा आपके कॉलेज में राष्ट्रीय ध्वज का अपमान हुआ है, अत: मैं आपके यहाँ नहीं आ सकता। इस पर दीक्षित जी आर्य समाज के नेता और संविधान परिषद् के सदस्य घनश्याम सिंह गुप्त से मिले। जो राष्ट्रीय ध्वज के सम्बन्ध में नियम बनाने वाली समिति में थे। उस समय के गृहमन्त्री गोविन्दवल्लभ पन्त ने इस पर निर्णय के लिए विधि मन्त्रालय से राय मांगी। अन्तत: विधि मन्त्रालय ने कॉलेज के पक्ष में निर्णय दिया और कहा- ओ३म् का झण्डा राष्ट्रीय झण्डे से ऊपर फहरा सकते हैं। इस निर्णय के बाद राज्यपाल कॉलेज में आये और दीक्षान्त समारोह को सम्बोधित किया।

इसी समय का एक और प्रसंग स्मरण आ रहा है। झज्जर लोकसभा क्षेत्र से हरियाणा लोक समिति के टिकिट पर १९६२ में जगदेव सिंह जी सिद्धान्ती ने चुनाव लड़ा था और वे विजयी रहे थे। उनके सामने कांग्रेस के प्रतापसिंह दौलता थे, उन्होंने उस चुनाव को पहले चुनाव आयोग में चुनौती दी। सिद्धान्ती जी के विरुद्ध दो आरोप लगाये- एक इन्होंने ओ३म् का झण्डा लगाकर साम्प्रदायिकता का सहरा लिया और दूसरा हिन्दी भाषा अमर रहे के नारे लगाकर लोगों को भड़काया। चुनाव आयोग में सिद्धान्ती जी ने कहा पंजाब के मुख्यमन्त्री प्रतापसिंह कैरो मेरे विरोधी हैं? न्यायाधीश पंजाब से बाहर का होना चाहिए, आयोग ने आपकी बात स्वीकार की, श्री एस.एन. सहाय को न्यायाधीश बनाया। श्री सहाय ने प्रतिपक्ष की आपत्ति निरस्त कर दी, श्री दौलता जी उच्च न्यायालय में गये वहाँ सिद्धान्ती जी हार गये, फिर सिद्धान्ती जी सर्वोच्च न्यायालय गये। पाँच न्यायाधीशों की पीठ में वाद की सुनवाई हुई मुख्य न्यायाधीश श्री गजेन्द्र गडकर थे। पीठ ने ओ३म् के झण्डे को धार्मिक साम्प्रदायिक चिह्न मानने से इंकार किया तथा भाषा के लिए नारे लगाने को वैधानिक अधिकार घोषित किया।

यह निर्णय १२ फरवरी १९६४ को न्यायाधीश ने दिया।

इस प्रकार हम देखते हैं समाज में सिद्धान्त निष्ठा होने पर ही हम उस मार्ग पर चल सकते हैं अन्यथा धन के लोभ और दूसरों को सन्तुष्ट करने के चक्कर में अपने सिद्धान्तों को तिलाञ्जलि देने में संकोच नहीं करते। आज आर्यसमाज की संस्थाओं में सिद्धान्त निष्ठा से रहित लोगों की अधिकता के कारण समय-समय पर इस प्रकार की दुर्घटनाएँ सामने आती है। कॉलेजों में आचार्य लोग ईद मनाते हैं, रोजा खोलते हैं। गणेश, सरस्वती की वन्दना करते हैं, आरती उतारते हैं। आर्यसमाज की सबसे बड़ी शिक्षण संस्था में अपने प्रधान की अस्थियाँ कलश लेकर यात्रा के साथ कलश को गंगा में प्रवाहित किया गया। दयानन्द कॉलेज, अजमेर के एक प्राचार्य द्वारा प्राध्यापकों के साथ स्वामी जी के दाह संस्कार के स्थान पर फूल चढ़ाये गये, आपत्ति करने पर कहने लगे- हम संकीर्णता से ऊपर हैं। एक आर्यसमाज के शिविर में शिव जी के गुणगान हो रहा था। यह सब इस कारण होता है क्योंकि हम अपने विचारों से न पूर्णत: परिचित हैं और न ही हमारी आस्था है। ऐसा होने पर हमें लोगों को सावधान करते रहना चाहिए। इन घटनाओं की उपेक्षा करने से प्रोत्साहन मिलता है, अत: जब कभी जहाँ कहीं इस प्रकार की त्रुटि होती दृष्टिगत हो उसपर ध्यान आकर्षित करना समाज के सदस्यों का दायित्व है। इससे स्वाभाविक रूप से होने वाली भूलों का निराकरण भी होता है। कवि ने ठीक ही कहा-

गच्छत: स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादत:।

चलते-चलते पैर फिसल जाय, ऐसा असावधानीवश हो जाता है। अत: सावधान रहना चाहिए।

- धर्मवीर

www.thearyasamaj.org

सत्वपुरुषान्यताख्याति

- स्वामी विष्वङ्

अध्यात्म-मार्ग में चलने वाले प्रत्येक साधक का कर्त्तव्य है कि वह अध्यात्म-मार्ग की सफलता के लिए 'सत्वपुरुषान्यताख्याति' को प्राप्त करे। सत्वपुरुषान्यताख्याति का अभिप्राय है सत्व=मन। यहाँ सत्व का अर्थ केवल मन को न लेकर सभी जड़ पदार्थों का ग्रहण करना चाहिए। यहाँ तो मन उदाहरण मात्र है। पुरुष=आत्मा, अन्यता=भिन्नता, ख्याति=ज्ञान। अर्थात् मन और आत्मा की भिन्नता का ज्ञान। जो साधक मन को और आत्मा को अलग-अलग जानता हुआ मन को जड़ और आत्मा को चेतन समझता है, वह अध्यात्म मार्ग में शीघ्रता से आगे बढ़ता है। साधक मन के स्वभावों का अध्ययन करके इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि मन में एक ही स्वभाव सदा नहीं रह सकता, क्योंकि मन परिणामी है=बदलाव को प्राप्त होता रहता है। इसलिए मन में कभी सात्विकता के कारण शान्त स्वभाव रहता है, कभी राजसिकता के कारण चंचल स्वभाव रहता है, कभी तामसिकता के कारण मूढ़ता का स्वभाव रहता है। ये तीनों स्वभाव बदलते रहते हैं। इस निष्कर्ष से साधक यह भी समझता है कि मन में स्वभावों का बदलाव स्वयं न हो कर मुझ आत्मा द्वारा होता रहता है। इससे आत्मा को यह बोध होता है कि जो वस्तु स्वत: नहीं बदलती है, जिसे बदलने के लिए अन्य चेतन की आवश्यकता पड़ती है, तो वह निश्चित रूप से जड़ वस्तु होगी, क्योंकि जड़ वस्तु स्वयं कुछ नहीं करता, उसे चेतन कराता रहता है।

सत्व अर्थात् मन में और पुरुष अर्थात् आत्मा में क्या-क्या भिन्नता है इसका अच्छी प्रकार से ज्ञान होना चाहिए। आत्मा को अपरिणामी कहा गया है। परिणामी को समझ लेने से अपरिणामी का ज्ञान स्वत: ही हो जाता है। साधक व्यवहार काल में रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्दों को ग्रहण करता है या अनुभव करता है। साधक वस्तु के जिस रूप का ग्रहण करता है, वह रूप सदा एक जैसा पकड़ में नहीं आता है। जिस प्रतिशत में प्रथम बार ग्रहण करता है, उसी प्रतिशत में सदा ग्रहण नहीं करता है क्योंकि उस वस्तु के रूप में निरन्तर न्यूनता=कमी होती रहती है। वह कैसा भी रूप हो, उसमें परिवर्तन रूपी कमी होती ही रहेगी, इसी प्रकार रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द को भी समझना चाहिए। परन्तु आत्मा में इस प्रकार का परिवर्तन कभी नहीं होता है। आत्मा सदा एक रस रहता है। जिस प्रकार भौतिक पदार्थों को समझने के लिए उनके गुणों के माध्यम से समझना पड़ता है, उसी प्रकार आत्मा को जानने के लिए आत्मा के गुणों को जानना पड़ता है। जिस प्रकार वस्त्र का रूप निरन्तर बदलता हुआ फीका पड़ जाता है उस प्रकार आत्मा की 'इच्छा' में बदलाव नहीं आते हैं। आत्मा की इच्छा सदा एक रस अर्थात् बिना बदलाव के एक जैसी रहती है। यहाँ कोई ऐसा कह सकता है कि इच्छा में बदलाव होता है। क्या बदलाव होता है? अधिक इच्छा, मध्यम इच्छा और अल्प=न्यून इच्छा। यहाँ अधिक, मध्यम, न्यून ज्ञान के कारण है। यह इच्छा का स्वभाव नहीं है कि इच्छा कम हो जाये या अधिक बढ़ जाये। इच्छा तो सदा एक जैसी रहती है अर्थात् अप्राप्त सुख को प्राप्त करने की इच्छा और प्राप्त दु:ख को दूर करने की इच्छा सदा एक जैसी रहती है, इसमें कभी बदलाव नहीं होता है। इस इच्छा का न बदलना ही आत्मा को अपरिणामी सिद्ध करता है। आत्मा के इस अपरिणामित्व को जान लेने से साधक बहुत बड़े दु:ख से छुटकारा पा सकता है।

जैसी इच्छा को ले कर बड़े-बड़े ऋषि-महर्षियों ने अपने प्रयोजन को पूरा किया। वैसी ही इच्छा मुझ साधक में भी है, ऐसी अनुभूति करके साधक निराशा=हताशा से ऊपर उठ कर बहुत आगे बढ़ सकता है। अन्यथा साधक यह सोचने लगता है कि मुझ में ऐसी इच्छा नहीं है, जैसी इच्छा ऋषि-महर्षियों में होती है। ऐसा वही साधक अपने आप को कोसने लगता है, जो सत्वपुरुषान्यताख्याति के माध्यम से अपने अपरिणामित्व को नहीं जानता। इस प्रकार आत्मा स्वयं के अपरिणामित्व को जान कर-बहुत सारे दु:खों से बच जाता है, क्योंकि जब आत्मा में किसी भी प्रकार का बदलाव ही नहीं होता, तो आत्मा की किसी भी प्रकार की हानि भी क्यों होगी? अर्थात् नहीं होगी। आत्मा और मन में दूसरी भिन्नता यह भी है कि आत्मा दूसरों के साथ घुल-मिल नहीं सकता अर्थात् जिस प्रकार से जड़ पदार्थ दूसरों के साथ घुल-मिल जाते हैं, वैसा आत्मा नहीं है। उदाहरण के लिए आटा और पानी मिल कर घुल-मिल जाते हैं। सूजी, चीनी, पानी, घी आदि घुल-मिल कर एक हलुवा के रूप में मिलते हैं, ऐसा आत्मा नहीं है। इस ब्रह्माण्ड में कोई भी ऐसा जड़ पदार्थ नहीं है, जो दूसरे जड़ पदार्थ के साथ घुलता-मिलता न हो। इसलिए मन भी रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द के साथ घुल-मिल कर, मानो मन रूप, रस आदि की तरह बन जाता है। परन्तु

www.thearyasamaj.org

आत्मा मन के समान नहीं है। आत्मा में रूप, रस आदि प्रवेश नहीं करते, वे तो मन तक ही सीमित रहते हैं। योग में इस न घुलने-मिलने को अप्रतिसंक्रमा शब्द से कहा है अर्थात् आत्मा न घुलने-मिलने वाला=अप्रतिसंक्रमा है।

आत्मा को यह बोध हो जाता है कि कोई भी जड़ वस्तु मुझ में आकर घुलती-मिलती नहीं है। ऐसी स्थिति में आत्मा को दु:ख नहीं होता, क्योंकि आत्मा यह समझ चुका होता है कि कोई भी रूप कितना ही सुन्दर हो, वह मुझ आत्मा में प्रवेश नहीं करता, फिर दु:ख कैसे होगा? साधक यह विवेक रखता है कि यदि कोई रूप देखने को मिलता है और वह देखने योग्य है, जिससे मेरे अध्यात्म-मार्ग में वह बाधक नहीं है, तो अवश्य देखूँगा यदि बाधक है, तो नहीं देखूँगा। यदि किसी के अधिकार में है और उसने देखने के लिए प्रतिबन्ध किया हुआ है, तो नहीं देखूँगा और यदि अनधिकारी के अधिकार में है, वह उसे रोके रखा है, तो भी नहीं देखूँगा। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्र है, वह अपनी स्वतन्त्रता से रोक सकता है या दिखा सकता है। इस प्रकार का विवेक साधक में होने से साधक कभी दु:खी नहीं होता। जड़ वस्तु की परतन्त्रता को और चेतन वस्तु की स्वतन्त्रता को जानने वाले साधक को क्यों कर दु:ख होगा? अर्थात् कभी नहीं होगा। जिस प्रकार रूप के विषय में साधक दु:खी नहीं होता उसी प्रकार रस, गन्ध आदि के विषय में भी समझना चाहिए। न केवल रूप, रस आदि के विषय में बल्कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में स्थित किसी भी विषय के न मिलने पर भी साधक दु:खी नहीं होता। संसार के बड़े से बड़े मूल्यवान वस्तु भी क्यों न हो किसी को लेकर दु:खी नहीं होता। इतना ही नहीं, जिस शरीर को ले कर व्यक्ति सब से अधिक संवेदनशील रहता है, उस शरीर के लिए भी साधक कभी दु:खी नहीं होता। यह सब आत्मा को जानने से ही सम्भव है।

जहाँ आत्मा में रूप, रस आदि आ कर घुलते-मिलते नहीं हैं, वहाँ आत्मा में अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश भी घुलते-मिलते नहीं हैं अर्थात् आत्मा में वे प्रवेश नहीं करते हैं। फिर ये रहते कहाँ पर हैं? ये अविद्या आदि मन में ही रहते हैं, इनका आधार मन है, मन में रहते हुए आत्मा को दु:खी करते हैं। परन्तु साधक इन के यथार्थता को जान कर-समझ कर इन अविद्या आदि क्लेशों को मन से दूर करने के लिए उद्यम-पुरुषार्थ करता रहता है। आत्मा के अप्रतिसंक्रमा रूप को जानने के पश्चात् आत्मा हताशा-निराशा आदि से ऊपर उठा हुआ अपने आपको जानता है, जिससे स्वयं को निर्लिप्त अनुभव करता है। आत्मा अपने आपको शुद्ध अनुभव करता है। जिस प्रकार अविद्या, अस्मिता आदि क्लेश मन में रहते हुए मन को अशुद्ध करते हैं, वैसे आत्मा को अशुद्ध नहीं कर सकते। क्योंकि कारण स्पष्ट है- आत्मा में नहीं रहते। इसीलिए आत्मा को शुद्ध कहा जाता है। जिस प्रकार से अविद्या आदि क्लेश आत्मा में नहीं रहते, उसी प्रकार वासनाएँ=संस्कार भी आत्मा में नहीं रहते। चाहे कुसंस्कार हों या सुसंस्कार हों, दोनों ही आत्मा से भिन्न मन में रहते हैं और मन को ही बदलते रहते हैं। इस कारण मन अशुद्ध होता है और आत्मा इस अशुद्धि से परे है।

जो साधक आत्मा को शुद्ध अनुभव करता है, वह दु:खों से परे रहता है, दु:खी नहीं होता। मन की मलिनता से स्वयं (आत्मा) को मलिन नहीं समझता, इस कारण अप्रसन्नता को जीवन में नहीं आने देता है। सदा प्रसन्न रहते हुए मन की मलिनता को साफ करता रहता है, जिससे मन साधक को अपवर्ग-मोक्ष की ओर ले जा सके। साधक आत्मा को शुद्ध अनुभव करने के साथ-साथ आत्मा की अनन्तता को भी समझता है। यहाँ अनन्तता का अभिप्राय स्थान की दृष्टि से न ले कर काल की दृष्टि से लेना चाहिए। क्योंकि आत्मा स्थान की दृष्टि से एक देशी है सर्वदेशी नहीं है। इसलिए आत्मा को काल की दृष्टि से ही अनन्त समझना चाहिए। काल आत्मा को नष्ट नहीं कर सकता, क्योंकि आत्मा अनादि है, जो वस्तु अनादि होती है, वह वस्तु अनन्त भी होती है। इस कारण आत्मा अनन्त है। जब आत्मा के इस अनन्तता को साधक समझ लेता है, तो साधक को कभी भय नहीं होता। जिससे नष्ट होने का या मृत्यु का कोई भी भय उत्पन्न ही नहीं होता। साधक निडर हो कर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है। ऐसी स्थिति में साधक को स्वयं की हानि का कोई दु:ख नहीं होता। वह सदा प्रसन्न रह कर ही समस्त कार्यों को करता रहता है। वह किसी भी विपत्ति से या समस्या से या बाधा से घबराता नहीं है बल्कि सब का समाधान कर लेता है और भविष्य के लिए सुनिश्चित अनुभव करता है।

इस प्रकार आत्मा और मन की भिन्नता को जानने वाला साधक निर्विघ्नता से अपने अध्यात्म-मार्ग में आगे बढ़ता हुआ शीघ्र ही अपने लक्ष्य को पा लेता है। इस प्रकार लक्ष्य-प्राप्ति 'सत्वपुरुषान्यताख्याति' को जानने पर सम्भव हो पाता है।

- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

जो योगी प्राण के तुल्य सब को भूषित करता ईश्वर के तुल्य अच्छे-अच्छे गुणों में व्याप्त होता है और अन्न वा जल के सदृश सुख देता है वही योग के बीच में समर्थ होता है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.७

www.thearyasamaj.org

वेद-गोष्ठी वर्ष २०१३ के पुरस्कार हेतु निबन्ध आमन्त्रित हैं

वानप्रस्थी श्री व्रतमुनि स्थिर निधि की ओर से वेद-गोष्ठी में पढ़े जाने वाले निबन्धों को पुरस्कृत करने की योजना है। पुरस्कार राशि निम्न प्रकार निर्धारित है-

प्रथम पुरस्कार - ६१००.०० रु.

द्वितीय पुरस्कार - ४१००.०० रु.

तृतीय पुरस्कार - ३१००.०० रु.

तृतीय पुरस्कार नव लेखकों ३० वर्ष की आयु तक के लिए निश्चित किया गया है।

जिन विद्वानों ने इस वर्ष ऋषि मेले के अवसर पर सम्पन्न वेद-गोष्ठी में निबन्ध वाचन किया है। यदि वे अपने निबन्ध में संशोधन करने के इच्छुक हैं तो वे ३१ जनवरी २०१४ तक अपने संशोधित निबन्ध संयोजक वेद-गोष्ठी, परोपकारिणी सभा, अजमेर के पते पर भेज सकते हैं।

यदि कोई विद्वान् अभी तक अपना निबन्ध नहीं भेज पाये हैं वे भी ३१ जनवरी २०१४ तक इसी विषय पर निबन्ध लिखकर भेज सकते हैं।

पश्चात् निबन्ध चयन समिति को भेजे जायेंगे। उनका निर्णय अन्तिम और मान्य होगा। पुरस्कार ऋषि मेला समारोह में प्रदान किये जायेंगे।

वेद-गोष्ठी का विषय ''वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास''

- संयोजक वेद-गोष्ठी

ऋषि मेले में पधारने व सहयोग भेजने के लिए

धन्यवाद

सामाजिक कार्यों की सफलता का मानदण्ड कार्यों में समाज का सहयोग होता है। यह सहयोग न केवल आर्थिक होता है अपितु समाज के कार्यकर्त्ताओं, प्रेमियों की उपस्थिति भी होती है। दोनों ही रूप में आर्यजनों ने ऋषि मेले में सहयोग देकर समारोह को सफल बनाया, सभा सबका आभार मानती है और धन्यवाद करती है। जिन्होंने न पहुँचकर भी आर्थिक एवं भावनात्मक सहयोग दिया है, वे भी हमारे लिये अभिनन्दनीय है।

आपने कष्ट एवं असुविधा उठाकर समारोह की सफलता में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। आपका सहयोग हम कार्यकर्ताओं को उत्साह व प्रेरणा देगा।

आशा है आपका सहयोग सभा को सतत प्राप्त होता रहेगा।

आपको भूरि-भूरि मंगल कामना है।

- मन्त्री, परोपकारिणी सभा

जो विद्या की वृद्धि के लिए पठन-पाठन रूप यज्ञकर्म्म करने वाला मनुष्य है वह अपने यज्ञ के अनुष्ठान से सब की पुष्टि तथा संतोष करने वाला होता है इस से ऐसा प्रयत्न सब मनुष्यों को करना उचित है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२७

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. **बैंक खाता संख्या-09110400005753O बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।**
IFSC - IBKL0000091

२. **बैंक खाता संख्या -10158172715 बैंक का नाम** - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

www.thearyasamaj.org

कुछ तड़प-कुछ झड़प

– राजेन्द्र जिज्ञासु

स्वामी स्वतन्त्रानन्द पीठः– पूज्य उपाध्याय जी ने श्रद्धेय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी विषयक उद्‌गार इस सेवक को लिखकर भेजे। इन्हें यथा स्थान ग्रन्थ में तो दिया गया परन्तु पण्डित जी की यह धरोहर आज भी हमारे पास है। इसमें स्वामी जी के बारे में एक महत्त्वपूर्ण वाक्य है, ''उनमें दूर तक देखने व गहरा सोचने की शक्ति थी।''

श्री महाराज के मन में यह विचार आया कि आर्यसमाज के पास अनेक ऐसे विद्वान् हों जिनका अरबी, फारसी आदि भाषाओं पर अधिकार हो। वे इस्लामी साहित्य के मर्मज्ञ हों। धर्मप्रचार व धर्म रक्षा के लिए यह परमावश्यक है। महाराज के इस विचार की जानकारी सरदार बसाखासिंह जी ठेकेदार नाम के एक दृढ़ आर्य पुरुष को हुई। आप कादियाँ के समीप के एक ग्राम के रहने वाले थे। तब खानकी हैडवर्क्स (पश्चिमी पंजाब में) कार्यरत थे। आप ने इसके लिए उपदेशक विद्यालय में स्थिर निधि स्थापित की।

इसी निधि से एक मौलवी की सेवायें लेकर श्री पं. शिवदत्त जी मौलवी फ़ाज़िल, पूज्य पं. शान्तिप्रकाश जी, पं. रुचिराम जी, पं. निरञ्जनदेव जी, पं. हरिदेव जी आदि कई विद्वान् रत्न आर्य जाति को मिले। ये सब एक से बढ़कर एक थे। पं. रुचिराम जी की प्रतिभा कुछ और ही ढंग की थी। आर्यसमाज के लोग यह समझते हैं कि आप भी पं. शान्तिप्रकाश जी, पं. धर्मभिक्षु जी सदृश इस्लाम के मर्मज्ञ थे। ऐसा तो नहीं है। उनकी विलक्षण प्रतिभा की खोज और विकास स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की ऊहा का ही फल था जिस पर कभी फिर लिखा जावेगा। देश की अखण्डता व गौरव की रक्षा के लिए पं. रुचिराम जी की देन को हमारे पहले तीन प्रधान मन्त्री व सेना के सेनापति जानते थे। हम जानते तो हैं परन्तु बहुत थोड़ा।

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की ऊहा व दूरदर्शिता का ही यह मधुर फल था कि पश्चिम पंजाब में मुसलमानों के दो सम्प्रदायों के विवाद में मध्यस्थ ने पूज्य पं. शान्तिप्रकाश जी से पूछकर अपना निर्णय दिया अर्थात् जो कुछ पण्डित जी ने लिखवाया और बताया वही मध्यस्थ ने प्रमाणिक माना। उसने कई मुसलमानों की प्रेरणा से पं. शान्तिप्रकाश जी से सहायता ली। यह कोई साधारण सी घटना तो है नहीं।

कुछ वर्ष पूर्व हमने परोपकारिणी सभा को यह सुझाव दिया कि स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के नाम नामी पर फिर ऐसी पीठ की स्थापना की जावे। इस सेवक ने दो तीन किस्तों में पच्चीस सहस्र देने का वचन दिया जो पूरा किया गया। दस लाख रु. की वचन स्वामी सदानन्द जी ने दिया जिसकी तभी घोषणा कर दी गई। उनको जंचेगा तो सम्भव है वह भी कभी अपना वचन पूरा कर ही देंगे।

सभा ने कार्य आरम्भ कर दिया। कई अड़चनें आती रहीं। श्री धर्मवीर जी, श्री ओममुनि जी दोनों अब पीठ को पूरा-पूरा महत्त्व देते हैं। कुछ युवक अरबी पढ़ते रहे। धर्मवीर जी का व मेरा मत यह बना है कि केवल युवा विद्यार्थी ही नहीं, बड़ी आयु के सुपठित भाई और सेवानिवृत्त स्वस्थ समाज सेवी भी बड़ी संख्या में आगे आकर पीठ में प्रवेश लें। संस्कृत का कुछ कार्य साधक ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक भी आगे आयें। लगातार दो तीन वर्ष जो न दे सकें वे छह-छह मास रहकर उर्दू, अरबी, संस्कृत का ज्ञान प्राप्त करें। दो तीन मास में लिपि ज्ञान प्राप्त करने से कुछ नहीं बन सकता। निरन्तर श्रम करने से कुछ हाथ लगेगा।

दयनीय स्थति अब इस समय यह है कि पहले श्री शहरयार शीराज़ी जी ने पुराने उर्दू पत्रों, मुबाहिसा, आर्य मुसाफिर व मुसाफिर की फाईलें देखनी चाहीं तो सब ने हाथ खड़े कर दिये। पं. रामचन्द्र जी देहलवी तथा स्वामी दर्शनानन्द जी पर मेरे ग्रन्थ श्री शीराजी जी की प्रेरणा व माँग का फल है। अब नौशाद आलिम जी एक ऐसी ही माँग लेकर सभाओं के पास पहुँचे हैं। उन्होंने मुझे बताया है कि दिल्ली वालों ने आपका पता दिया है सो तो श्री धर्मवीर जी पहले ही उन्हें विश्वास दिला चुके थे कि परोपकारिणी सभा उन्हें निराश नहीं करेगी। पूरा सहयोग करेगी।

यदि स्वतन्त्रानन्द पीठ को आर्यसमाजियों ने भरपूर उत्साह से सहयोग किया होता तो आज हमारे पास चार-पाँच युवा विद्वान् होते। राजवीर जी आदि का विकास भी किन्हीं कारणों से रुका पड़ा है। कुछ युवा सम्मेलनों के आयोजन, क्रान्तिकारियों के नाम रट लेने व जोशीले भाषणों तथा गोष्ठियों में पत्र वाचन से कुछ बनने वाला नहीं। इन तिलों में तेल नहीं। पीठ ही ऊर्जा का स्रोत बन सकती है। मैं तो जीवन के अन्तिम श्वास तक लगा रहूँगा। स्वामी सत्यप्रकाश जी ने मुम्बई के सान्ताक्रूज़ समाज में हमारे व्याख्यान की श्रोताओं के मुख से प्रशंसा सुनकर कहा थाः-

''राजेन्द्र! अब पं. लेखराम जी की परम्परा के तुम अन्तिम विद्वान् हो।''

आर्यो! मुम्बई के महासम्मेलन में हमने अपना व्याख्यान स्वामी जी के इसी कथन से आरम्भ किया था। जिन्हें ऋषि

www.thearyasamaj.org

मिशन प्यारा है, जो धर्म रक्षा व जाति रक्षा के लिए कुछ अरमान रखते हैं उन्हें अपने आचरण से स्वामी सत्यप्रकाश जी की अन्त:वेदना को अनुभव करके अपने आचरण से उनके कथन को झुठलाना होगा। पं. लेखराम जी का वंश फूले फले इसके लिए सब उपाय करने होंगे। इसका और कोई मार्ग है ही नहीं। केवल और केवल 'स्वामी स्वतन्त्रानन्द पीठ' है।

वैसे आर्यसमाज में अभी दो-चार व्यक्ति हैं जो मेरे से कहीं अधिक उर्दू, फ़ारसी, कुरान, हदीस जानते हैं परन्तु उन्होंने आज पर्यन्त न तो विरोधियों के किसी लेख का उत्तर दिया है, न ही परकीय मतों पर कभी व्याख्यान देकर उनके प्रहार का प्रतिकार किया है। जान जोखिम में वे क्यों डालें? इससे अच्छा तो यही है कि वेदोपदेश वेद सन्देश देते रहो। आँखें बन्द करके गायत्री जप करवाते जाओ। लोग आपको योगनिष्ठ महात्मा जानेंगे मानेंगे। क्या लेना है पं. लेखराम व महाशय राजपाल का अनुकरण करके?

ऋषि दयानन्द संसार की दृष्टि में:- इस विषय की एक पठनीय पुस्तक कभी टोहाना की गुप्ता एण्ड कम्पनी ने प्रकाशित की थी। इसमें अपने संस्मरण देने वालों से कहीं-कहीं स्मृति दोष से चूक भी हुई। कुछ मित्रों ने हमें इसका हिन्दी अनुवाद करने को कहा। हमने यह कार्य बहुत कुछ कर दिया। इतने में सोनीपत समाज की देवियों ने देहरादून में श्री धर्मवीर जी से इस विषय में बात की, तो डॉ. धर्मवीर जी ने उन्हें कहा, यह कार्य अवश्य कीजिये परन्तु प्रकाशन से पूर्व जिज्ञासु जी को एक बार अवश्य दिखा देना। हम भी तब देहरादून में ही थे।

वे देवियाँ हमें मिलीं। यह चर्चा चला दी। हमने उनका उत्साह बढ़ाया। यह भी नहीं कहा कि हम यह कार्य बहुत कुछ कर चुके। सोनीपत के पुराने आर्य पुरुष कोहली जी द्वारा इस पुस्तक की छपाई देखकर हमें हर्ष हुआ। प्रकाशन से पूर्व उन्होंने हमसे या किसी जानकार से यथा राणा प्रताप जी से सम्पर्क ही नहीं किया। कोहली जी उर्दू के अच्छे जानकार तो हैं परन्तु साहित्य के अनुभवी नहीं, सो पुस्तक में उर्दू लिपि के दोष से कुछ नामों को ठीक-ठीक न पढ़ सके। अनुवाद में कहीं-कहीं चूक हो गई है। कई महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों का साथ सम्पादक को/अनुवादक को कुछ परिचय देना चाहिए।

मुद्रण दोष तो प्रूफ़ से भी रह ही जाते हैं। लक्ष्मण जी के ग्रन्थ में प्रूफ़ की कई अशुद्धियाँ हम भी न पकड़ पाये। कोहली जी का प्रयास अच्छा है।

यह कहाँ लिखा है?:- छोटे लोग भूल करें तो उसका प्रभाव सीमित होता है। विद्वानों व बड़े लोगों की भूल विनाशकारी होती है। महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में भी ऐसा संकेत दिया है। इन दिनों आर्यजगत् में सुन्दर नगर वाले महात्मा जी के एक लेख को पढ़कर कुछ सज्जनों ने हमें पूछा है कि कांग्रेस के इतिहास में कहाँ यह लिखा है कि गाँधी राष्ट्रपिता हैं परन्तु ऋषि दयानन्द राष्ट्र पितामह हैं। हमने कई एक को कहा कि यह प्रश्न लेखक से पूछिए या उस पत्र के सम्पादक से। जब स्वाध्याय प्रेमियों ने बार-बार अनुरोध किया तो हम कुछ निवेदन करते हैं।

अप्रमाणिक मिथ्या कथन से लेखक का भले ही कुछ न बिगड़े परन्तु ऐसे लेखों से समाज को अपयश अवश्य मिलता है। इतिहास शास्त्र ऐसी खोज का बोझ नहीं सह सकता।

जब कांग्रेस का इतिहास लिखा गया तब तो राष्ट्रपिता शब्द का भी प्रचलन नहीं था। महर्षि के लिए राष्ट्रपितामह विशेष का प्रयोग तो लोकसभा के एक अध्यक्ष जी ने ऋषि को श्रद्धाञ्जलि देते समय किया था।

जिस विषय का ज्ञान न हो, उस पर बोलने व लिखने से बचना चाहिए। लक्ष्मण जी के ग्रन्थ में ऋषि के व्यक्तित्व के प्रत्येक पक्ष पर पर्याप्त रोचक, प्रेरक तथा नये-नये प्रसंग व घटनायें मिलेंगी। एक-एक घटना का प्रमाण व अता-पता भी साथ के साथ है।

पंखविहीन मिथ्या कल्पनाओं व गप्पों का सहारा लेने की ऋषि को आवश्यकता ही नहीं। वेद सत्य को भूमि का आधार बताता है। प्यारा ऋषि इस वेदादेश को मानता है और यही उसका सर्वस्व है। उस ऋषि की गरिमा, शोभा, बड़प्पन और ऋषित्व उसकी सत्यनिष्ठा, संयम, मर्यादापालन, अटल ईश्वर विश्वास, तप, त्याग, पुरुषार्थ व परमार्थ से है। ऋषि को असत्य से चिढ़ है।

दिल से मगर सब मान चुके हैं:- महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के अटल नियमों के आदि स्रोत अनादि वेद ज्ञान का डंका बजाकर अंधविश्वासों को चुनौती दी। शोभन सरकार महाराज के स्वप्न को स्वीकार करते हुए सरकार स्वर्ण भण्डार की खुदाई में लगी। देश का प्रथम साहसी राजनेता नरेन्द्र मोदी है जिसने इस अंधविश्वास को चुनौती दी। कांग्रेस सटपटा उठी। उसने एक बाबा से मोदी को पत्र लगाया। मोदी ने उलझन से बचते हुए शोभन सरकार को नमन करके नीतिमत्ता दिखाई। मोदी को लिखा पत्र अनुभवी चतुर कांग्रेसी की पार्टी सेवा है। हमारा दलगत राजनीति से दूर-दूर से कुछ लेना देना नहीं। हमें हर्ष है कि एक गुजराती नेता के हृदय में ऋषि सन्देश ने अंगड़ाई ली और उसने हुँकार लगाई।

कांग्रेसी नेता तो खुदाई की नई-नई व्याख्यायें कर रहे हैं परन्तु जनता दल यू के नेता श्री के.सी. त्यागी ने तो

www.thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द के अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश की दुहाई देकर अंधविश्वास पर जब चढ़ाई की तो हमें शरर जी की ये पंक्तियाँ याद आ गईं:-

कोई जुबाँ पर लाये न लाये महर्षि महिमा गाये न गाये।
दिल से मगर सब मान चुके हैं योगी ने जो उपकार कमाये।।

जनता दल वाले यह भी तो स्वीकार करें कि ऋषि ने अंधविश्वासों का ही उन्मूलन नहीं किया। नित्य अनादि सत्य का भी प्रकाश किया। हज यात्रा हो अथवा नदी-नालों में स्नान और तीर्थ यात्राओं से पुण्य की प्राप्ति व मोक्ष नहीं मिलता। तिलक लगाने व टोपी पहनने से वोट तो भले ही मिलते हों, व्यक्ति धर्मात्मा, परोपकारी व सत्यवादी तथा देशभक्त नहीं बनते।

आर्यसमाज ब्यावर की स्थापना तिथि:- महर्षि दयानन्द जी महाराज ९ सितम्बर १८८१ से लेकर २१ सितम्बर सन् १८८१ तक ब्यावर के डाक बंगला में डेरा लगाकर वेद-प्रचार की निर्मल धारा प्रवाहित की। २१ सितम्बर को ही ऋषि मसूदा के लिए प्रस्थान कर गये। इसी यात्रा में ब्यावर में आर्यसमाज का बीज बोया गया। 'आर्य समाचार' मासिक मेरठ के सन् १८८८ के कार्तिक मास के अंक के पृष्ठ १८६ पर यह छपा मिलता है कि ''ब्यावर नगर अपर नाम नवाँनगर राजस्थान प्रदेश में श्री स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी महाराज के उपदेश से २८ मई सन् १८८८ को आर्यसमाज स्थापित हुआ है। सर्वशक्तिमान् परमेश्वर इसको चिरजीवी बनाये। वास्तव में स्वामी जी महाराज आर्य धर्म के प्रसार में अत्यन्त पुरुषार्थ व लगन से कार्यरत रहते हैं।'' हमारा यह प्रयास रहेगा कि 'पत्रों के दर्पण' से प्रत्येक अंक से इतिहास को महत्त्वपूर्ण घटनाओं पर कुछ प्रकाश डाला जावे।

एक अत्यन्त प्रेरक प्रसंग:- यह सन् १९४४ के अन्त की या १९४५ के आरम्भिक दिनों की घटना है। मेरे जन्म स्थान ग्राम मालोमहे ज़िला स्यालकोट में लाला सोहनलाल जी की पुत्री शान्ति देवी के विवाह संस्कार पर स्यालकोट से गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक पं. शिवदत्त जी आमन्त्रित थे। मुझे प्रातः साढ़े तीन मील (पाँच किलोमीटर) की दूरी पर पैदल स्कूल जाना था। मैं तब सातवीं कक्षा में पढ़ता था। मैंने अपने एक चाचा के पुत्र कृष्ण से कहा, वैदिक रीति से विवाह देखकर ही चलेंगे। लेट होने से दण्ड तो मिलेगा ही। वह भी मान गया। हमने विवाह संस्कार देखा। संस्कार की समाप्ति पर महिलाओं के गीतों की बजाये सब ग्रामीण आर्यों ने यह माँग की कि उन्हें यह भजन सुनाया जावे:-

गुजरातों चढ़या चन्न हुआ बड़ा आनन्द
जिसका वाह वाह था नाम दयानन्द,

गुजरातों चढ़या चन्न (चाँद)......

पण्डित जी बहुत मधुर गायक थे। यह गीत देश विभाजन के पश्चात् भी पंजाब में बड़ा लोकप्रिय था। इस भजन को सुनकर अन्य प्रान्तों के आर्य भी इसे सुनकर झूम उठते थे। गलियों में विधर्मी भी इस गीत की ये पंक्तियाँ गाते देखे जाते थे। इस घटना की या प्रसंग की विलक्षणता यही है कि विवाह के अवसर पर लोक गीत व सामाजिक रीतियों को ही अधिक महत्त्व दिया जाता है। पाठक उन ग्रामीण आर्य स्त्री पुरुषों की (आबाल वृद्ध की) ऋषि भक्ति की रंगत की कल्पना तो करें जिन्होंने एक स्वर से यह माँग की कि 'गुजगतों चढ़या चन्न' यह भजन सुनाया जावे। सूर्योदय होते-होते सारा ग्राम था नाम दयानन्द जिसका वाह! वाह!! गुजरातों चढ़या चन्न..... से गूञ्ज उठा। कारण? पण्डित जी के पीछे-पीछे विवाह मण्डप में बैठे आबल वृद्ध आर्य सब बड़े जोश से इसे गाते थे। बाल्यकाल की इस घटना का स्मरण करके मेरे हृदय में आज भी ऋषि भक्ति की बिजलियाँ कौंधती हैं।

हिन्दुओं का अपमान:- कुछ दिन पूर्व श्री अशोक सिंघल ने एक वक्तव्य में किसी बात पर उत्तर प्रदेश को कोसते हुए कहा कि ऐसा व्यवहार हिन्दुओं का अपमान है। हर बात पर श्री अशोक जी का वक्तव्य इस वाक्य के साथ ही पूरा होता है। हिन्दू का तिरस्कार करना ही इस देश में धर्म निरपेक्षता की कसौटी है। यह हम मानते हैं परन्तु विश्व हिन्दू परिषद् ने हिन्दू का सम्मान बढ़ाने के लिए कौनसी ठोस सेवा की है। मूर्त्तिपूजा के प्रचार में सारी शक्ति लगाकर हिन्दू की जड़ता ही तो बढ़ाई है। तरुण विजय जी का रोना भी तो यही है। यम-नियमों को विश्व के सामने रखा जाता, हिन्दुओं में एकेश्वरवाद का प्रचार किया जाता, ईश्वर की सर्वव्यापकता का बोध हिन्दू युवक-युवतियों का करवाया जाता, तो कुछ गतिशीलता आती। स्वाभिमान जागता परन्तु कर्मफल सिद्धान्त, पुनर्जन्म की मान्यता की विधर्मी खिल्ली उड़ाते हैं। तोगड़िया त्रिशूल बाँटने में गौरव मानते हैं। वार-प्रहार का उत्तर क्यों नहीं देते? मनुस्मृति के शुद्ध स्वरूप की रक्षा के लिए क्या किया? जब तक जातीय रोगों व अंधविश्वासों से युद्ध नहीं छेड़ा जावेगा, हिन्दुओं का अपमान होता ही रहेगा। रोगी शरीर तो दूध घी को भी पचा नहीं पाता। रोग निवृत्ति ऋषि की ओषधि के सेवन से होगी। जाति भेद मिटाये बिना नहीं होगी। यह सुन लो एक मुसलमान विचारक लिखता है कि वेद के बीस सहस्र मन्त्रों में जो जल, नदी, नाले, पेड़, पशु, जड़ की पूजा का विधान कहीं नहीं। केवल एकेश्वरवाद है परन्तु इन मूर्ख ब्राह्मणों का मूर्तिपूजा से ही पेट भरता है।

वेद सदन, अबोहर, पंजाब-१५२११६

www.thearyasamaj.org

वैदिक साहित्य में सात संख्या

- विरजानन्द दैवकरणी

वेद, ब्राह्मणग्रन्थ, आरण्यक ग्रन्थ, उपनिषद्, निरुक्त, व्याकरणशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, गणितशास्त्र तथा विमानशास्त्र आदि संस्कृत के ग्रन्थों में एक-से लेकर महाशंख तक की संख्यायें देखने में आती हैं। जहाँ कहीं निश्चित संख्या दी गई है, वहाँ किसी विशेष पदार्थ की ओर संकेत किया गया है। उसके अर्थ विभिन्न शास्त्रों में प्रकरणानुसार भिन्न-भिन्न अभिप्रेत होते हैं। वेदों में सप्तसंख्या का प्रयोग इस प्रकार आया है-

१. **सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।** -यजु. ३१.१५

२. **ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।** -अथर्व. १.१.१

३. **सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे, सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम् सप्तापः स्वपतो लोकमीयुः.....।** -यजु. ३४.५५

४. **सप्त ते अग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्त ऋषयः सप्त धाम प्रियाणि। सप्त होत्राः सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा।।** -यजु. १७.७९

५. **सप्त होतार ऋतुशो यजन्ति।** -यजु. २३.५८

६. **सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रम्।** -ऋग्वेद १.१६४.२

७. **अत्रापश्यं विश्पतिं सप्तपुत्रम्।** -ऋग्वेद १.१६४.१

इसी प्रकार सप्त तस्थुः, सप्तचक्रं, सप्त वहन्ति, सप्तस्वसारः, सप्त नाम, सप्त वाणी, सप्त क्षरन्ति, सप्त त्वा हरितः, सप्त शुन्ध्युवः, सप्त दिशेनाना सूर्याः, आदित्यासः सप्त तेभिः, सप्त धामानि, सप्तभिः पुत्रैरुदितिः, सप्त मर्यादाः, सप्तमे सप्त शाकिनः, सप्त वीरासः, सप्त स्वसृः, सप्त होत्राणि, सप्तानां सप्त ऋषयः, सप्त द्युम्नानि, सप्त अधिश्रियः, सप्तापो देवीः, सप्त होमाः, सप्त ऋषीन्, सप्त सूर्यः, सप्त चक्रान्, सप्तर्चेभ्यः स्वाहा, सप्त चक्रान् वहति, सप्त मेधान् पशवः, सप्त चमे, सप्त जातान् न्यर्बुदः, सप्त च याः, सप्त छन्दांसि, आदि सप्त संख्या से विशेषित अनेक पद वेद और वैदिक साहित्य में पाये जाते हैं।

इनसे सिद्ध है कि सात संख्या और उससे सम्बद्ध पदार्थ-विशेषों का वैदिक साहित्य में अति महत्त्व है। वेदों के भाष्यकार इस सप्त-सात का अर्थ विभिन्न रूपों से जोड़ते हैं। कहीं वह उपयुक्त लगता है, तो कहीं पूरा स्पष्टीकरण नहीं हो पाता है। यहाँ वैदिक साहित्य में सात संख्या से सम्बन्धित कुछ पदार्थों आदि की सूची प्रस्तुत की जा रही है। यथा-

१. सात स्वर- षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत, निषाद।

२. इनके देवता - अग्निः, सविता, सोम, बृहस्पति, मित्रावरुण, इन्द्र, विश्वेदेव।

३. सात वर्ण- सित, पिशंग, सारंग, कृष्ण, नील, लोहित, गौर।

४. सात गोत्र- आग्निवेश्य, काश्यप, गौतम, आंगिरस, भार्गव, कौशिक, वासिष्ठ।

५. सात स्वर- उदात्त, उदात्ततर, अनुदात्त, अनुदात्ततर, स्वरित, स्वरितोदात्त, एकश्रुतिः।

६. सात ज्वाला- काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, सुधूम्रवर्णा, स्फुलिंगिनी, विश्वरूपी।

७. सात महर्षि- मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ।

८. छन्द- गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप्, जगती।

९. सात छन्द- अतिजगती, शक्वरी, अतिशक्वरी, अष्टि, अत्यष्टि, धृति, अतिधृति।

१०. सात छन्द- कृति, अभिकृति, संस्कृति, विकृति, आकृति, प्रकृति, उत्कृति।

११. सात धातु- रस, रक्त, माँस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र।

१२. सात मर्यादा- चोरी, व्यभिचार, ब्रह्महत्या, भ्रूणहत्या, सुरापान, दुष्कर्मणः, पुनाकरणम्, अनृत।

१३. सात समुद्र- लवणोद, ऐक्ष्वोद, घृतोद, क्षारोद, रुधिमण्डोद, स्वादूदक, क्षीरोदक।

१४. सात द्वीप- जम्बू, प्लक्ष, कुच, क्रौञ्च, शाक, शाल्मलि, पुष्कर।

१५. सात विभक्ति- प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी।

१६. सात कारक- कर्त्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण।

१७. सप्तपदी- इष्, ऊर्क्, रामस्पोष, मयोभव, प्रजा, ऋतु, सखा।

१८. सप्त पाताल- अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल, पाताल।

१९. सात शक्तियाँ- म, ल, य, र, स, व, न।

२०. (विमान की) अदिति, पृथिवी, वायु, सूर्य, इन्द्र, जल, अम्बर।

२१. सात विष-प्रभावी पदार्थ- मेद, असृक्, मांस, मज्जा, अस्थि, त्वचा, बुद्धि।

२२.सात शक्त्युद्गम- तुन्दिल, पञ्जर, अंशुप=शक्तिप, अपकर्षक, सान्धानिक, दार्पणिक, शक्तिप्रसवक।

www.thearyasamaj.org

२३. **सप्तेन्द्रिय**- ब्रह्मवर्चस्, यश, स्वप्न, क्रोध, श्लाघा, रूप, पुण्यगन्ध।

२४. **सप्त ग्राम्यपशु**- गौ, अश्व, हस्ती, उष्ट्र, अजा, अवि, गर्दभ:।

२५. **सप्त मनुष्य**- मूढ़, मूढतर, मूढतम, विद्वान्, विद्वत्तर, विद्वत्तम, अनूचान।

२६. **सात विष शक्तियाँ**- गालिनी, कुण्टिणी, काली, पिञ्जुला, उल्लणा, मरा, उद्गामा।

२७. **सात धाम**- जन्म, नाम, स्थान, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।

इसी प्रकार सात वायु, सात धूम, सात प्राण, सात इन्द्रियाँ, सात रंग, सात छिद्र, सात दोष, सात अमृत, सात प्रकार की सूर्यकिरणें आदि लोक प्रसिद्ध हैं ही।

वैदिक साहित्य का विलोडन करने से तथा पूर्वापर प्रसंग देखकर अनुमान करने से वेदादि में प्रयुक्त सप्त संख्या की संगति भली-भाँति लगाई जा सकती है।

इसी भाँति वेद में तीन और नौ संख्या का भी बहुलता से प्रयोग किया गया है। कुछ विद्वान् ७/३ सात को तीन से गुणा करके भी कहीं-कहीं मन्त्रार्थ की संगति लगाया करते हैं। जघान नवतिर्नव, सहस्राय, अयुताय, शताय, चत्वार्ययुता, अष्टा सहस्त्रा, दशधुरं, सहस्रेणेव सचते, सृष्टि सहस्रम्, अशीति, शतवन्तम्, सहस्त्रिणम्, शतमुष्ट्रानां ददत् सहस्रा दश गोनाम्। वेदों में जहाँ ऐसे निश्चित संख्या वाचक पद लिखे हैं, वहाँ उनका अभिप्राय बहु=अधिक वाची न लेकर संख्याविशेष का ही अर्थ लेना योग्य है, क्योंकि दिन-रात के श्वास-प्रश्वास, ज्योतिष के अहर्गण, त्रिगुणात्मक प्रकृति जब विकृति में परिवर्तित होती है उसका समय तथा परमाणुओं की गतिविधि, संरचना, यज्ञ के विशिष्ट अंगों आदि गूढ़ विषयों के वर्णन घास, पेड़, पौधे, वनस्पतियों के प्रकारों की संख्या, जीव की शरीरधारी योनियों की संख्या तथा नक्षत्रादि के ज्ञान हेतु भी संख्या पदों का प्रयोग वेद में किया जाता है। अत: वेदार्थ करते समय यथासम्भव संगति लगाने का यत्न करना चाहिए।

ऐसे ही ४९ उनञ्चास संख्या की वैदिक साहित्य में चर्चा है। पृथिवी के चारों ओर सात-सात कोश के सात प्रकार के वायुचक्र हैं, अर्थात् पृथिवी के चारों ओर ४९ कोश तक सात वायु हैं। क्षितिज की सीमा भी ४९ कोश की होती है। यदि आप समतल स्थल पर खड़े हों और आगे की ओर दृष्टिपात करें तो आपको साढ़े चौबीस कोश के आगे पृथिवी और आकाश मिले हुए दिखाई देंगे, यही क्षितिज कहलाता है। इसी भाँति आपके पीछे, दायें और बायें भाग में भी साढ़े चौबीस कोश तक क्षितिज दिखाई देगा। आगे और पीछे का दोनों मिलकर तथा दायीं-बायीं ओर का मिलकर भी ४९-४९ कोश का क्षितिज होता है, अत: इस पृथ्वी विस्तार की संगति इस प्रकार भी लगाई जा सकती है। इसी विस्तार को पुराणों में ४९ कोटि योजन लिखकर अतिरंजित कर दिया गया है। पुराणों की अतिशयोक्ति को हटा दिया जाये तो उनमें भी कई स्थलों पर प्राकृतिक गूढ़ तत्त्वों की व्याख्या मिल सकती है, जो तत्कालीन विद्वानों के गूढ़ अन्वेषण के आधार पर लिखी गई थी। अब परम्परा के लुप्त हो जाने से हमें विसंगत दिखाई देती हैं। इन संख्याओं के गूढ़ार्थ को जानने की ओर प्रयत्न होना चाहिए। जैसे आयुर्वेद ग्रन्थों में मानव की न्यूनतम आयु ३६००० रात्रि लिखी गई है, इसका अभिप्राय है १०० वर्ष। इसकी संगति ३६००० बार सृष्टि और प्रलय का समय है, इसके साथ लगाने से जीव की मोक्षावधि का ज्ञान होता है।

(१) जैसे महर्षि दयानन्द के अनुसार सप्त का अर्थ-

सप्त- गायत्र्यादि सात छन्द।

सप्त- पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ+मन+बुद्धि।

सप्त- पाँच प्राण-+मन+आत्मा।

सप्त- काली, कराली आदि सात ज्वालाएँ।

सप्त धाम- जन्म, नाम, स्थान, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।

(२) ७/३=२१ पाँच सूक्ष्मभूत, पाँच स्थूलभूत, पाँच ज्ञानेन्द्रिय, प्रकृति, महतत्त्व, अहंकार, सत्त्व, रजस्, तमस् (ये तीन गुण)। -महर्षि दयानन्द, यजु. ३१.१५

जैसे मनुष्य इस सृष्टि में ३६००० रात्रि तक जीवित रहता है अथवा रहना चाहिए। जैसे मनुष्य की आयु ३६००० रात्रि (शतवर्ष) निश्चित है। इसी प्रकार परमात्मा की शतवर्ष आयु तक (३६००० बार सृष्टि की प्रलय तक) जीव मोक्ष में रहता है। यहाँ मोक्ष की सीमा निर्धारित की है, उसी को स्पष्ट करने के लिए मनुष्य की शतवार्षिक आयु से परमेश्वर की शतवर्षीय आयु से तुलना और गणना करने के लिए कल्पना की गई है, क्योंकि वस्तुत: परमेश्वर की कोई आयु नहीं होती, परन्तु मोक्ष विधि परमात्मा की शतायु के बराबर होती है यही दिखाना लक्ष्य है। इन वैदिक संख्याओं में बायें से दायें, दायें से बायें, ऊपर से नीचे, नीचे से ऊपर, योग, वियोग, गुणन, भाग आदि गणित के सभी प्रकार अपनाकर इनका रहस्य समझने का प्रयत्न करना चाहिए, तभी सत्यता के निकट पहुँचा जा सकता है। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो वेद में गाय और ऊँटों का दान तथा युद्ध में मारे गए शत्रुओं की संख्या जैसे अर्थ करके वेद में इतिहास खोजते हुए अर्थ का अनर्थ ही करते रह जायेंगे। साथ ही इन्हें ऋषियों द्वारा गाये गए मन्त्र बतलाने में भी संकोच नहीं करेंगे। जैसे कि आंग्ल लोग वेदों से खिलवाड़ कर गये हैं। अत: वेदों के सत्य अभिप्राय तक पहुँचना सबका कर्त्तव्य है।

- गुरुकुल झज्जर, हरियाणा

www.thearyasamaj.org

भूः भुवः स्वः

- महात्मा चैतन्यमुनि

ओ३म् कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।

(यजु. ४०-२)

हे मनुष्य! (**इह**) इस लोक में (**कर्माणि कुर्वन् एव**) कर्मों को करते हुए ही तूने जीना है, (**शतं समाः जिजीविषेत्**) तू सौ वर्ष जीने की कामना कर, (**एवं त्वयि इतः अन्यथा न अस्ति**) कर्म करते हुए सौ वर्ष जीना ही तेरे जीवन का एकमात्र नियम है और कोई अन्य नियम नहीं मगर (**न कर्म लिप्यते नरे**) इन कर्मों में उलझ नहीं जाना बल्कि विरत होकर सदा कर्मशील बने रहना। जीव कर्म करने में तो स्वतन्त्र है मगर फल भोगने में वह परतन्त्र है क्योंकि कर्मों का फल तो न्यायकारी परमात्मा ने देना है। इसलिए इस कर्म स्वतन्त्रता का लाभ उठाकर सदा कर्मशील बनें रहना चाहिए और ये कर्म निष्कामभाव से करने चाहिए। यजुर्वेद में ही अन्यत्र जीव को क्रतु कहा है- **ओ३म् क्रतो स्मर** (यजु. ४०-१५) श्री कृष्ण जी भी कहते हैं- **अहं क्रतुरहं यज्ञः** (गीता ९-१६) गीता में अन्यत्र यह भी कहा गया है कि बिना कर्म के तो व्यक्ति एक क्षण के लिए भी नहीं रह सकता है। अतः कर्म तो करने ही हैं मगर यदि व्यक्ति के द्वारा पुण्यकर्म किए जाएं तो इससे वह निष्काम-कर्मी और सुक्रतु बन जाता है। वेद में सुक्रतु बनने की प्रेरणा दी गई है और साथ ही प्रक्रिया बताई गई है-

ओ३म् त्रीणि त्रितस्य धारया पृष्ठेष्वैरयद्रयिम्।
मिमीते अस्य योजना वि सुक्रतुः।।

(साम. १०१५)

मन्त्र में सुक्रतु बनने के लिए मुख्यतः पहली बात कही गई कि **त्रीणि त्रितस्य धारया**, जो व्यक्ति जीवन में तीन बातों को धारण कर लेता है, वह सुक्रतु बन जाता है। ऐसी बहुत सी तीन बातें हैं मगर यहाँ हम **भूः भुवः स्वः** इन तीन व्याहृतियों की चर्चा करेंगे। मनु महाराज कहते हैं-

अकारं चाप्युकारं च मकारं च प्रजापतिः।
वेदत्रयान्निरदुहद् भूर्भुवःस्वरितीति च।।

(मनु. २-५१)

परमात्मा ने 'ओम्' शब्द के अ, उ, म् अक्षरों को तथा भूः भुवः स्वः गायत्री मन्त्र की इन तीन व्याहृतियों को तीन वेदों से दुहकर सार रूप में निकाला है। वेदों में कुल सात व्याहृतियाँ आई हैं जिनमें से भूः भुवः स्वः इन तीन को शास्त्रकारों ने 'महा-व्याहृतियों' के नाम से पुकारा है। व्याहृति का अर्थ है- **वि + आहृ-ति** अर्थात् विविध उपायों से चारों तरफ से इकट्ठा करके लाना। इस प्रकार व्याहृति वह साधन है जिसके द्वारा हम परमात्मा की शक्ति का आहरण कर सकें। तैत्तिरीय उपनिषद् (शिक्षा. व.) में कहा गया है-

भूर्भुवः सुवरिति वा एतास्तिस्त्रो व्याहृतयः।.....
भूरिति वा अयं लोकः। भुवः इत्यन्तरिक्षम्।
सुवरित्यसौ लोकः।

भूः भुवः स्वः ये तीन व्याहृतियाँ हैं। भूः का अर्थ है पृथिवी लोक, भुवः का अर्थ है अन्तरिक्षलोक और स्वः का अर्थ है अन्तरिक्ष से ऊपर का द्युलोक।

भूरिति वा अग्निः। भुवरिति वायुः सुवरित्यादित्यः।

भूः अग्नि है, भुवः वायु है और स्वः आदित्य है।

भूरिति वा ऋचः। भुवरिति सामानि। सुवरिति यजूँषि।
भूरिति वै प्राणः। भुवरित्यपानः। सुवरिति व्यानः।

भूः यह ऋचाओं-छन्दों का नाम है, भुवः यह सामवेद है और स्वः यह यजुर्वेद का नाम है। भूः प्राण है, भुवः अपान है और स्वः व्यान है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती 'पंचमहायज्ञविधि' में इसका अर्थ करते हैं-

प्राणयति जीवयति सर्वान् प्राणिनः स प्राणः,
प्राणादपि प्रियस्वरूपो वा स चेश्वर एव।

जो सब प्राणियों का जीवनदाता है और प्राण से भी प्यारा है, वह परमेश्वर भूः नामक है।

यो मुमुक्षूणां मुक्तानां स्वसेवकानां धर्म्मात्मनां सर्वं दुःखमपानयति दूरीकरोति सोऽपानो दयालुरीश्वरोऽस्ति।

अर्थात् जो मुक्ति चाहने वालों, मुक्तों, अपने सेवक धर्मात्माओं के सब दुःखों को दूर करता है वह दयालु ईश्वर भुवः=अपान नामक है। (**स्वरितिव्यानः**) जो सब जगत् में व्यापक हो के सबको नियम में रखता है और सबके ठहरने का स्थान तथा सुख स्वरूप है, इसमें परमेश्वर का नाम (स्वः) है। इस प्रकार हम देखते हैं कि इन तीन व्याहृतियों में परमात्मा के मुख्य तीन गुणों प्राण-स्वरूप, दुःख विनाशक और सुख स्वरूप का विवेचन है। 'संस्कार-विधि' में वे लिखते हैं- '(भूः) जो प्राण का भी प्राण (भुवः) सब दुःखों को छुड़ाने हारा (स्वः) स्वयं सुखस्वरूप और अपने उपासकों को सब सुखों की प्राप्ति कराने हारा है।' 'सत्यार्थ-प्रकाश' (तृतीय समु.) में वे लिखते हैं-

'भूः'-'भूरिति वै प्राणः यः प्राणयति चराचरं जगत्

www.thearyasamaj.org

स भूः स्वयंभूरीश्वरः।' जो सब जगत् के जीवन का आधार, प्राण से भी प्रिय और स्वयंभू है उस प्राण का वाचक होके भूः परमेश्वर का नाम है। '**भुवः**'–'**भुवरित्यपानः यः सर्वदुःखमपानयति सोऽपा नः**' जो सब दुःखों से रहित, जिसके संग से जीव सब दुःखों से छूट जाते हैं, इसलिए उस परमेश्वर का नाम भुवः है। **स्वः**– '**स्वरितिव्यानः यो विविधं जगद् व्यानति व्याप्नोति सः व्यानः।** जो नानाविध जगत् में व्यापक होके सबको धारण करता है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम स्वः है।'

उपरोक्त पंक्तियों में महर्षि जी ने '**भूः**' शब्द के मुख्यरूप से-जगत् के जीने का हेतु, जगत् के जीने का आधार, प्राणों से भी अधिक प्रिय और स्वयंभू भाव लिए है। वास्तव में वह परमात्मा ही प्राणीमात्र के जीवन का आधार है, यदि परमात्मा हमें हवा, पानी आदि नहीं देता तो हमारा जीना दूभर हो जाता। यही नहीं यह शरीर तथा अन्य साधन-प्रसाधन सब उसी के दिए हुए हैं। इसीलिए वह हमें प्राणों से भी प्रिय है–

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम्।
अग्ने रथं न वेद्यम्।। (साम. ५)

परमेश्वर अत्यन्त कान्तिमान्, प्राणी-मात्र के मित्र, उसकी उन्नति के साधक तथा उसके लिए जीवन-यात्रा में रथ के समान है। वे प्रभु.....

कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान्....अकामो धीरो अमृतः स्वयंभू.....
(यजु. ४०-८, अथर्व. १०-८-४४)

क्रान्तदर्शी, मनीषी, सर्वत्र विद्यमान् व स्वयंभू (स्वतः सिद्ध एवं स्वसत्ता में परनिरपेक्ष) सदा विद्यमान् रहने वाले तथा समस्त प्रजाओं के लिए उचित रूप से उनके कर्मों के अनुसार विविध पदार्थों की रचना करने वाले हैं। वे अकाम है, धीर है, अमृत और स्वयंभू है।

'**भुवः**' का भाव स्पष्ट करते हुए महर्षि जी ने कहा है कि परमात्मा मुक्ति की इच्छा करने वालों तथा अपने सेवक धर्मात्माओं को सब दुःखों से अलग करके सर्वथा सुख में रखता है। वेद कहता है कि वह प्रभु भव-सागर से उतरने के लिए एक नौका के समान है–

स न सिन्धुमिव नावयाति पर्षा स्वस्तये।
अप नः शोशुचदघम्।।
(ऋ. १-९७-८)

वह प्रभु हमें उत्तम स्थिति व कल्याण के लिए उसी प्रकार सब दुःखों से पार करके पालित व पूरित करता है जैसे नाव के द्वारा नदी को पार करते हैं मगर एक बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि प्रभु हमें तभी पार उतारेंगे यदि हम मुक्ति की इच्छा करेंगे तथा परमात्मा के सेवक बनेंगे अन्यथा–

यदा चर्मवदाकाशं वेष्टयिष्यन्ति मानवाः।
तदा देवमविज्ञाय दुःखस्यान्तो भविष्यति।।
(श्वेता. उप. ६-२०)

जब लोग चर्म की तरह आकाश को लपेट सकेंगे तब परमात्मा को जाने बिना दुःख का अन्त होगा। भाव यह है कि जैसे आकाश को लपेटना असम्भव है, इसी प्रकार परमात्मा की शरण बिना दुःखों का अन्त होना भी असम्भव है। इसलिए भुवः शब्द का अर्थ करते हुए कहा गया कि परमात्मा मुक्ति की इच्छा करने वालों और धर्मात्माओं के दुःख दूर करता है।

'**स्वः**' का भाव उन्होंने किया है– जो व्यापक होकर सबको नियम में रखता है, सबके रहने का स्थान व सुखस्वरूप परमात्मा सर्वव्यापक है। वे लिखते हैं–

'यदभिव्याप्य व्यानयति चेष्टयति प्राणादिसकलं
जगत् स व्यानः सर्वाधिष्ठानं बृहद् ब्रह्म।

जो सर्वजगत् में व्यापक होकर प्राणादि की चेष्टा कराता है, वह सर्वाधिष्ठान्=सर्वाधार=सबका आश्रय महान् भगवान् व्यान है। वेद कहता है–

एषो ह देवा प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः।
स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः।।
(यजु. ३२-४)

परमेश्वर सर्वदिशाओं-विदिशाओं में लक्षित है, वह अतीत में था, वह वर्तमान में भी व्यापकरूप से है। उसी ने पहले उत्पन्न किया, वही आगे उत्पत्ति करेगा, वह सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, महान् प्रभु प्रत्येक में गति का हेतु हुआ विद्यमान है। उस सुखस्वरूप प्रभु के सम्बन्ध में कहा गया है–

सत्रा विश्वं दधिषे केवलं सहः। (ऋग्. १-५७-६)

तू सदा पूर्ण और सुखदायी सामर्थ्य को धारण करता है.... **न ऋते त्वदमृता मादयन्ते।** (ऋग्. ७-११-१)

तेरे विना मुक्त आनन्द नहीं पा सकते.... क्योंकि केवल वह परमात्मा ही आनन्दस्वरूप है– **रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः।** (अथर्व. १०-८-४४) परमेश्वर रस से भरा है क्योंकि वह कहीं से अपूर्ण नहीं है। **आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्।** (तै. ३-६) ब्रह्म को आनन्द जानो,

रसो वै सः। रसःह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति। को ह्येवान्यात्क्ः प्राण्यात्। यदेश आकाश आनन्दो न स्यात्। एष ह्येवानन्दयति। (तै. २-७)

वह रस-रूप है, आनन्दस्वरूप ब्रह्म को पाकर ही जीवात्मा आनन्द वाला हो जाता है। यदि यह आनन्दस्वरूप

www.thearyasamaj.org

ब्रह्म हृदयाकाश में न हो तो कोई जीवित कैसे रह सकता है? यह ब्रह्म ही जीवात्मा को आनन्दमय करता है।

इस समूचे विवेचन से व्याहृतियों के अर्थ तथा महत्ता भली प्रकार से स्पष्ट हो जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि इस ज्ञान को व्यावहारिक स्तर पर आत्म-सात् करके अपने जीवन का उद्धार करना चाहिए ताकि इनका वास्तविक लाभ प्राप्त हो सके। उपनिषद् में (बृह.उप. ५-६-३,४) भू: भुव: स्व: के सम्बन्ध में कहा गया है- 'ब्रह्माण्ड के मण्डल में जो विराट् 'आदित्य-पुरुष' है, उसका 'भू:'- यह मानो सिर है, सिर एक होता है और भू: भी एक ही अक्षर है। उस विराट्-पुरुष के 'भुव:' मानो भुजाएं हैं, भुजाएँ दो होती हैं और भुव: में भी दो ही अक्षर है। उसके 'स्व:' मानो प्रतिष्ठा (पैर) है, पैर दो होते हैं और सुव: में भी दो ही अक्षर है। जैसे पुरुष की उपनिषद् होती है, (उसका ज्ञान होता है) वैसे सूर्य-रूप में प्रकट हो रहे विराट्-पुरुष की उपनिषद् 'अह:' है, दिन का प्रकाश है। जो ब्रह्माण्ड के विराट् तथा सत्य-रूप पुरुष की 'भूर्भुव: स्व:'- इन तीन व्याहृतियों में कल्पना कर उसकी उपासना करता है, वह पाप को मार भगाता है और पाप भी उसे छोड़ भागता है। पिण्ड के मण्डल में जो 'दक्षिणाक्षि-पुरुष' है, उसका 'भू:'- यह मानो सिर है, सिर एक होता है और भू: भी एक ही अक्षर है। पिण्ड-पुरुष के 'भुव:' मानो भुजाएँ हैं, भुजाएँ दो होती हैं और भुव: में भी दो ही अक्षर है। उसके 'स्व:' मानो प्रतिष्ठा (पैर) है, पैर दो होते हैं और सुव: में भी दो ही अक्षर है। जैसे पुरुष की उपनिषद् होती है (उसका ज्ञान होता है) वैसे 'दक्षिणाक्षि' में प्रकट हो रहे पिण्ड के पुरुष की उपनिषद् 'अहम्' है। मैं के दीपक से ही वह अपना प्रकाश करता है। जो पिण्ड के सत्य-रूप पुरुष की 'भूर्भुव स्व:'- इन तीन व्याहृतियों में कल्पना कर उसकी उपासना करता है, वह पाप को मार भगाता है और पाप भी उसे छोड़ भागता है।

तैत्तिरीय उप. (शिक्षा.व.) में मृत्यु के बाद जीवात्मा की गति का उपदेश देते हुए आचार्य अपने शिष्य से कहता है-

भूरित्यग्नौ प्रतितिष्ठति। भुवरिति वायौ।
सुवरित्यादित्ये। मह इति ब्रह्मणि। आप्नोति....
आकाशशरीरं ब्रह्म। सत्यात्मप्राणारामं मन आनन्दम्।
शान्तिसमृद्धममृतम्। इति प्राचीनयोग्योपास्स्व।।

इन व्याहृतियों को आत्म-सात् करने वाले के शरीर के तत्त्व, तत्त्वों में मिल जाते हैं- शरीर का प्राण या अग्नि तत्त्व, कारण अग्नि तत्त्व में लीन हो जाता है, अपान या वायु तत्त्व कारण वायु-तत्त्व में, व्यान या चक्षु इत्यादि इन्द्रियाँ सूर्य में और जीवात्मा स्वयं ब्रह्म में लीन (प्राप्त) हो जाता है। वह इन्द्रियों का अधिपति, मन का शासक, वाणी का स्वामी, आँख का स्वामी, कान का पति, बुद्धि का अधिष्ठाता यह सभी कुछ हो जाता है। अब तक जो उसका क्षुद्र-रूप था उसे छोड़कर वह अग्नि, वायु तथा आदित्य-यह ब्रह्म का विशाल रूप धारण कर लेता है, भूलोक के महान् आकाश को अब वह अपना शरीर बना लेता है, सत्य उसका आत्मा हो जाता है, प्राण हो जाता है, विश्राम-स्थान हो जाता है, आनन्द ही उसका मन हो जाता है, शान्ति ही उसकी सम्पत्ति हो जाती है, वह अमृत हो जाता है। व्याहृतियों के अनुष्ठान द्वारा वह महान् हो जाता है.... हे प्राचीन योग्य! प्राचीन काल से, जन्म-जन्मान्तर से योग्यता वाले संस्कारी शिष्य! इस प्रकार के जीवन की उपासना कर।

- महर्षि दयानन्द धाम, महादेव, सुन्दर नगर,
जि. मण्डी, हि.प्र.-१७४४०१

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग एक वर्ष से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आइ**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

जैसे पहिले विद्या पढ़ाने वाले अध्यापक लोग हुए वैसे हम लोगों को भी होना चाहिए।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४०

www.thearyasamaj.org

वैचारिक क्रान्ति हेतु सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र प्रचार-प्रसार की भव्य योजना

विचार किसी भी देश, समाज व जाति की अमूल्य निधि (सम्पत्ति) है। जिसके पास में ठोस श्रेष्ठ विचार नहीं या फिर विचार को फैलाने के साधन नहीं हैं या फिर जो व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अपने विचारों की अवहेलना करते रहते हैं, उनका अस्तित्त्व भी एक दिन समाप्त प्रायः हो जाता है। आज हर सम्प्रदाय, समाज, समूह व देश अपने विचारों का प्रचार-प्रसार बड़ी प्रबलता से हर क्षेत्र में व हर साधन से कर रहे हैं, लेकिन काफी समय से आर्यसमाज में वैचारिक शिथिलता देखी जा रही है। इस शिथिलता को दूर करने का मात्र एक ही उपाय है कि हम सभी आर्य जन ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत **अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का प्रचार नये शिक्षित लोगों में करें।** इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर सभा के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक मेला २०१४ दिल्ली में प्रचार-प्रसार की योजना तैयार की गयी है।

सत्यार्थप्रकाश ही क्यों?-१. यदि कोई व्यक्ति, समाज, समूह, संस्था या राष्ट्र एक ग्रन्थ (पुस्तक) पढ़कर विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो यह सत्यार्थप्रकाश से ही सम्भव है। २. आज के दूषित वातावरण में वैदिक वाङ्मय को ठीक-ठीक जानने हेतु, पढ़ने-पढ़ाने हेतु प्रथम सत्यार्थप्रकाश और महर्षि के अन्य ग्रन्थों का पढ़ना-जानना अत्यन्त आवश्यक है। ३. दर्शनशास्त्र, इतिहास, भारतीय परम्परा, कर्त्तव्य, धर्म-अधर्म, उचित-अनुचित, न्याय-अन्याय, सत्य-असत्य तथा मानवता आदि क्या हैं? यह सारी जानकारी सत्यार्थप्रकाश से प्राप्त होती है व होगी। ४. पाखण्ड, मक्कारी, कुरीतियों व बुराइयों का नाश भी सत्यार्थप्रकाश से सम्भव है। ५. सत्यार्थप्रकाश व ऋषि के अन्य ग्रन्थों की उपस्थिति में कोई विधर्मी अपनी शेखी नहीं मार सकता तथा किसी भी हिन्दू को बहकाकर विधर्मी नहीं बना सकता। ६. सत्यार्थप्रकाश के प्रभाव ने न जाने कितनों का जीवन ही बदल डाला। सत्यार्थप्रकाश के जोड़ की दूसरी पुस्तक दुर्लभ है, जिसमें ज्ञान का अमूल्य खजाना भरा पड़ा है। इसलिए इसका प्रचार-प्रसार अनिवार्य है, जरूरी है। **योजना का विवरण निम्न प्रकार का होगा**-१. सत्यार्थप्रकाश हिन्दी में आकार लगभग ६०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में होगी। लागत मूल्य ५०/- रुपये प्रति पुस्तक। २. ऋषि जीवन चरित्र हिन्दी में लगभग २०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में। लागत मूल्य ३०/- रुपये प्रति पुस्तक। ३. सत्यार्थप्रकाश हिन्दी से इतर (अन्य) भाषियों के लिए सी.डी.या डी.वी.डी. के माध्यम से उपलब्ध करवाया जायेगा। इस डी.वी.डी. में लगभग १८ भाषाओं में सत्यार्थप्रकाश होगा। लागत मूल्य लगभग २५/- होगा। ४. संक्षिप्त ऋषि जीवन चरित्र अंग्रेजी में। लागत मूल्य १०/- रुपये।

नोट-यह साहित्य वैचारिक क्रान्ति के लिए व वैदिक धर्म प्रचार-प्रसार के लिए गैर आर्यसमाजी सज्जनों व संस्थानों आदि को निःशुल्क या अल्प मूल्य में वितरित किया जायेगा। साहित्य का ठीक-ठीक उपयोग हो व योग्य शिक्षित विचारवान् व्यक्तियों तथा संस्थानों तक पहुँचे इसके लिए अच्छी वितरण व्यवस्था की जाएगी। योग्य प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं का चयन कर कार्य में नियुक्त किया जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति, संस्था आदि से एक फार्म भरवाया जायेगा, जिसमें उनका पूर्ण पता सम्पर्क आदि हो। जिससे भविष्य में परिणाम का मूल्यांकन किया जा सके। ग्रन्थों की प्रामाणिकता, शुद्धता व साज-सज्जा सुन्दरता का विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस प्रचार-प्रसार योजना का उद्देश्य सत्यार्थप्रकाश व महर्षि के जीवन-चरित्र के प्रचार-प्रसार के माध्यम से मानव मात्र का कल्याण करना है। यह प्रचार-प्रसार मुख्य रूप से शिक्षित गैर आर्यसमाजी लोगों के लिए होगा। यह कार्य पूर्णरूप से महर्षि के मन्तव्यों के अनुरूप हो इसका विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस कार्य की सफलता के लिए सभी आर्यजनों से, समाजों से व संस्थानों से निवेदन है कि इस महान् कार्य में तन-मन-धन से अपना सहयोग करने व अपने इष्ट मित्रों को भी सहयोग करने की प्रेरणा करें।

नोट-अपना आर्थिक सहयोग आप परोपकारिणी सभा अजमेर के नाम प्रेषित करते समय **सत्यार्थप्रकाश प्रचार-प्रसार शीर्षक** अवश्य लिखें। धन प्रेषित करने हेतु आप चैक, ड्राफ्ट व सीधे राशि सभा के बैंक खाते में जमा करवाकर जमा पर्ची की प्रतिलिपि प्रेषित कर देवें या फिर ईमेल, दूरभाष द्वारा सूचित कर सकते हैं। धन्यवाद।

खाता धारक का नाम-**परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आइ**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**09110400057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

नोट : इस योजना हेतु दिया गया दान आयकर की धारा ८० जी के अन्तर्गत कर मुक्त होगा।

सम्पर्क : मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

www.thearyasamaj.org

वेद एवं ऋषि ग्रन्थों में समग्र उन्नति का सन्देश

- प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

यह सर्वसम्मत ऐतिहासिक सत्य है कि भारतवर्ष की पुण्यभूमि पर जब से आर्य (हिन्दू) आकर बसे, तब से लेकर महाभारत के हजार-दो हजार साल पहले तक भारतवर्ष संसार का सर्वश्रेष्ठ, सब प्रकार से उन्नत समृद्ध देश था। यह भी प्रकृति का दैवी विधान है कि जब आवश्यकता से बहुत अधिक समृद्धि, सुख-सुविधा हो जाती है तो सर्व-साधारण के जीवन में विलास, आरामतलबी, सदाचार का पतन आने लग जाता है। समृद्धि के चरम उत्कर्ष पर, तप और सदाचार के अभाव में दुराचार, विलास बढ़ जाने से सुरा, सुन्दरी, पारस्परिक कलह, व्यक्ति और राष्ट्र का अध:पतन होने लगता है। यह महाभारत काल में बहुत सुस्पष्ट दिखाई पड़ता है जब धर्मराज भी पक्का जुआरी, धृतराष्ट्र जैसा राजा आँखों का अँधा तो था ही, हृदय और बुद्धि से भी अति मलिन हो गया था। भीष्म पितामह और आचार्य द्रोण जैसे प्रतिष्ठित वृद्ध भी कुलवधू द्रौपदी के निष्ठुर अपमान को सह गये थे। और तो और उस युग के सर्वश्रेष्ठ पुरुष, वेद-वेदाङ्ग तत्वज्ञ श्रीकृष्ण अपने कुल को सर्वनाशी मदिरा-पान और अन्त:कलह से नहीं बचा पाए थे और सारे यादव अपने में ही मर मिट गए थे।

महाभारत के पश्चात् यज्ञों में पाखण्ड और पशु-हिंसा, सुरापान, बौद्धों का वज्रयान, चारित्रिक पतन, ये सभी देश के अध:पतन में सहयोगी बने, इसी के साथ तान्त्रिकों का पंचमकार भी बहुमुखी पतन में सहयोगी बने। बौद्धों के अहिंसावादी उत्कर्ष में परमेश्वर को असत्य बताकर इस संसार की महिमा को प्रतिष्ठित किया। बौद्धों का कथन है कि ''संसार सत्य है और ब्रह्म मिथ्या है'' के उत्तर में आदि शंकराचार्य ने ''ब्रह्म सत्यम् जगन्मिथ्या'' का सिद्धान्त निरूपित किया। बौद्धों ने ब्रह्म को मिथ्या कहा तो उत्तर में शंकराचार्य ने संसार को- जगत् को मिथ्या कहा। ''ब्रह्म सत्यम् जगन्मिथ्या'' के सिद्धान्त का हमारे व्यक्ति, समाज और राष्ट्र पर बड़ा अनिष्टकारी प्रभाव पड़ा, जो समाज के श्रेष्ठ लोग थे, विद्वान् सदाचारी नेता होने के योग्य थे, वे जगत् को मिथ्या मानकर सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन से अलग-अलग हो गए और देश, राष्ट्र सब प्रकार से पतन की ओर बढ़ चला। शूद्रों का अपमान, उनसे घृणा, नारियों का तिरस्कार आरम्भ हो गया। समाज में ऊँच-नीच का भाव पैदा हो गया। साठ वर्ष के बूढ़े राणा, राजाओं के लिए सोलह साल की कन्याओं के डोले लड़कर भेजे जाने लगे। मुट्ठी भर हूण, पठान, मुगल आदि कच्चा माँस खाने वाले और चमड़ा पहनने वाले लुटेरों ने देश को तबाह कर दिया। महाराणा सांगा और सोमनाथ जैसे सैकड़ों, हजारों काण्ड देश में होने लगे। इस समग्र सर्वतोन्मुखी पतन का एकमात्र कारण यह था कि भारतवर्ष के जनजीवन से वेदों और ऋषियों के सन्देश भुला दिए गए और उनकी जगह पर शंकराचार्य का जगन्मिथ्या, बौद्धों की वज्रयानी चरित्रहीनता और अहिंसा, तांत्रिकों का पंचमकार सेवन आदि देश में प्रचलित हो गए। ध्यान देने की बात है कि वेद और ऋषियों के दर्शन संसार को सर्वतोमुखी समग्र उत्थान का सन्देश देते हैं।

भारतवर्ष की प्राचीन संस्कृति में ''धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष'' को परम पुरुषार्थ कहा गया है। यहाँ धर्म के साथ अर्थ और काम को आवश्यक माना गया है। दर्शन के ऋषि कहते हैं **''यतोऽभ्युदयनि:श्रेयससिद्धि: स धर्म:''** यहाँ सांसारिक उन्नति और मोक्ष, दोनों को धर्म का अंग बताया गया है। दर्शन शास्त्र कहते हैं **''भोगापवर्गार्थं दृश्यम्''** यह संसार भोगों को भोगने और मोक्ष की सिद्धि के लिए बनाया गया है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी कहा है- **''साधन धाम मोक्ष कर द्वारा''** महर्षि व्यास के वेदान्त दर्शन के प्रथम चार सूत्रों को देखने से सिद्ध होता है कि यह संसार वास्तविक है और स्वामी शंकराचार्य की उक्ति 'जगन्मिथ्या' उनकी अपनी ऊहा, सूझबूझ, शायद बौद्धों को पराजित करने के लिए है। वेदान्त दर्शन का सूत्र है

१. अथाऽतो ब्रह्म जिज्ञासा

- अब ब्रह्म की जिज्ञासा करते हैं।

२. जन्माद्यस्ययत:

-क्योंकि उसी ब्रह्म ने इस संसार की सृष्टि, पालन और प्रलय की व्यवस्था की है।

३. शास्त्रयोनित्वात्

-उसी ब्रह्म ने वेदों का ज्ञान दिया है।

४. तत्तु समन्वयात्

- जैसा वेदों में वर्णन है वैसा ही इस संसार में पाया जाता है। अर्थात् वेदों के ज्ञान और संसार की व्यवस्था में समन्वय है।

कहा जाता है कि यह संसार परमेश्वर का दृश्य-काव्य है और वेद परमेश्वर का श्रव्य-काव्य है, दोनों ही परमेश्वरकृत हैं, दोनों में समन्वय है। उदाहरण के लिए सोनी की टी.वी. और उसी का मैनुअल (बुकलेट) में समन्वय होता है। किसी और कम्पनी की टी.वी. हो किसी

www.thearyasamaj.org

और कम्पनी के बुकलेट हो तो समन्वय नहीं होगा। जब वेद के ज्ञान और संसार की व्यवस्था में समन्वय है तो पता चलता है कि जिसने वेद-ज्ञान दिया है उसी ने संसार का निर्माण किया है अर्थात् जगत् को परमेश्वर ने बनाया है और परमेश्वर की कृति मिथ्या नहीं हो सकती। अत: सिद्ध होता है कि 'जगन्मिथ्या' का सिद्धान्त सत्य नहीं है। भारतीय संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ और सर्वमान्य ग्रन्थ वेद हैं। चारों वेदों में बीस हजार से भी अधिक मन्त्र हैं। इनमें हजारों मन्त्रों में जीवन के उत्थान, सांसारिक उन्नति, अर्थ की सम्पन्नता आदि का बहुत सीधा और सुस्पष्ट उपदेश दिया गया है- उदाहरण के लिए कुछ मन्त्र और उनके सरल से अर्थ यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं-

१.स्तुता मया वरदा वेदमाता....
मह्यम् दत्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्

अथर्व. १९/७१/१

अर्थात् हमने वर देने वाली वेदमाता की स्तुति की, उसका अध्ययन किया और उस पर आचरण किया। इससे वेदज्ञान ने हमको आयु, प्राण, प्रजा, पशु, कीर्ति, धन, बल, सब कुछ दिया और हमको ब्रह्मलोक अर्थात् मोक्ष तक पहुँचाया।

२.इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि
चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे।
पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां
स्वाद्मानम् वाचः सुदिनत्वमह्नाम्

ऋग्वेद २/२१/६

अर्थात् हे ऐश्वर्य देने वाले परमेश्वर! हमें श्रेष्ठ धन, सम्पत्ति दीजिये, हमें ज्ञान और दक्षता प्रदान कीजिये जो हमारे जीवन का पोषण करें। हमको मधुर प्रभावशाली वाणी दीजिये और हमारे जीवन में सदा सब दिन सुदिन सुन्दर बने रहें।

३.उद्यानं ते पुरुष नावयानं,
जीवातुम् ते दक्षतातिं कृणोमि

अथर्व. ८/१/६

अर्थात् परमेश्वर मनुष्य को आश्वासन उपदेश देते हैं कि हे मनुष्यों! हमने तुमको मनुष्य जीवन इसलिए दिया है कि तुम सदा अपने जीवन में, अपने समाज में उन्नति करते रहो, ऊपर उठते रहो और कभी अवनति न करो। तुम और तुम्हारा समाज कभी पतन की ओर न जाये। तुम्हारे जीवन में सदा दक्षता, सबलता बनी रहे। इसका भाव यह है कि परमेश्वर ने हमें हमारे जीवन को उन्नति और दक्षता का वरदान दिया है।

४.प्रजापते..... यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो
अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्

ऋग्वेद १०/१२१/१०

अर्थात् हे सब प्रजाओं के पालन करने वाले परमेश्वर! हम जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले होकर आपका आश्रय लेवें, आपसे प्रार्थना करें, वह-वह हमारी सभी इच्छाएँ पूर्ण होवें और आप की कृपा से सब प्रकार के धन और ऐश्वर्यों के स्वामी होवें।

इस छोटे से लेख में हम यह प्रयास कर रहे हैं कि मानव सभ्यता के श्रेष्ठ ग्रन्थ वेदों में और ऋषियों के उपदेशों में हमें यह बताया गया है कि हमारा जीवन, हमारा समाज, यह संसार, सांसारिक और पारमार्थिक उन्नति के लिए परमेश्वर ने बनाया है तथा यह जगत् मिथ्या नहीं है। हमारा देश और हमारा समाज जब तक इस आदर्श पर चलता रहा, हम संसार के सर्वाधिक सुखी, सम्पन्न राष्ट्र बने हुए थे। इन उपदेशों को भुलाकर, संसार की उपेक्षा करके हम निर्बल हो गए।

ईशावास्यम्, पी-३०, कालिन्दी हाउसिंग स्कीम,
कोलकाता-७०००८९

ई-मेल द्वारा परोपकारी नि:शुल्क

परोपकारी के पाठकों को प्रसन्नता होगी कि अब परोपकारी ई-मेल द्वारा भी भेजी जा रही है। परोपकारिणी सभा की वेब-साइट पर तो परोपकारी पहले से ही नि:शुल्क उपलब्ध है। विश्व में कहीं भी कोई भी इसे वेब-साइट पर पढ़ सकता है। इसके साथ ही अब यह सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है कि परोपकारी आपके पास ई-मेल द्वारा पहुँच जाये। इससे यह पत्रिका शीघ्र व अधिक सुन्दर रूप में आप तक पहुँच सकेगी। आप जहां भी रहें, कभी भी पढ़ना चाहें, यह आपके पास रहेगी। डाक की अव्यवस्था से छुटकारा मिल सकेगा। यह आपको नियमित मिलती रहेगी। इससे रासायनिक रंगों व कागज का उपयोग भी कम होगा, खर्च भी घटेगा। अत: पाठकों से अनुरोध है कि **कृपया अपना ई-मेल पता सभा को ई-मेल से भिजवा देवें।** आप जिन इष्ट-मित्रों, परिजनों व संस्थाओं को परोपकारी भिजवाना चाहते हैं, उनके ई-मेल पते भी भिजवा देवें, उन्हें भी यह नि:शुल्क भेज दी जायेगी। ई-मेल- psabhaa@gmail.com

-व्यवस्थापक

www.thearyasamaj.org

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर (द्वितीय स्तर)

दिनांक १५ से २२ जून २०१४

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान-विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग-साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे। साथ ही पढ़ाये गये विषयों की लिखित परीक्षा व आपके द्वारा पालन किये गये शिविर के अनुशासन का भी आंकलन किया जायेगा, इसी आधार पर प्रमाण-पत्र भी दिये जायेंगे। इस दिशा में अब तक दो शिविरों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर सफल प्रयास किया गया है। **इस द्वितीय स्तर के शिविर में वे ही भाग ले सकेंगे, जिन्होंने प्राथमिक स्तर वाले शिविर में भाग लिया है।** इस शिविर में प्राथमिक स्तर वाले शिविर की अपेक्षा अधिक सूक्ष्मता से विषयों का अनुभव करवाया जाएगा और वैसा ही सूक्ष्मता से, कठोरता से नियम व अनुशासन होगा।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. दिनचर्या के कुछ भाग में आकृति मौन भी अनिवार्य होगा।
३. प्रार्थी की न्यूनतम दसवीं के स्तर की योग्यता अनिवार्य है। इस हेतु प्रमाण-पत्र की प्रतिलिपि लाना आवश्यक है।
४. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
५. शारीरिक व मानसिक सात्विकता के लिए यथासम्भव भोजन की मात्रा निश्चित होगी।
६. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
७. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
८. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
९. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
१०. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
११. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
१२. किसी भी मादक द्रव्य, चाय-कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
१३. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
१४. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मंत्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व

www.thearyasamaj.org

शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. ११ से १५ मार्च, २०१४ **सन्ध्या गोष्ठी।**

२. १३ से २० अप्रैल, २०१४ **ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर,** सम्पर्क : ०९४१४००३७५६, समय : मध्याह्न १.३० से २.३० बजे।

३. १६ से २३ मई, २०१४ **आर्यवीर शिविर,** सम्पर्क- ०९४१४४३६०३१

४. २४ से ३१ मई, २०१४ **संस्कृत सम्भाषण शिविर,** सम्पर्क- ०९४१४७०९४९४

५. १ से ८ जून, २०१४ **आर्य वीराङ्गना शिविर,** सम्पर्क- ०९४१४४३६०३१

६. १५ से २२ जून, २०१४- **योग-साधना शिविर (द्वितीय स्तर),** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

www.thearyasamaj.org

ध्यान प्रशिक्षण योजना

ध्यान का महत्त्व सदा से रहा है। आज के तनाव व प्रतिस्पर्धा के वातावरण में यह अधिक आवश्यक हो गया है। नई पीढ़ी यज्ञादि कर्मकाण्ड की अपेक्षा-ध्यान में अधिक रुचि व आकर्षण रखने लगी है। प्रौढ़ों व वृद्धों की आध्यात्मिक उन्नति की चाह ध्यान के माध्यम से पूरी हो सकती है। समाज सुधार व उन्नति के इच्छुक व इसमें प्रयत्नशील आर्यों को ध्यान प्रशिक्षण का उपाय सार्थक लगेगा। ऐसी इच्छा वाले सज्जन अपने यहाँ किसी भी आर्यसमाज, आर्य संस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, गुरुकुल, सार्वजनिक स्थान आदि में 'ध्यान-प्रशिक्षण' करवाना चाहते हों, तो कृपया अपने व कार्यक्रम-स्थान, समय आदि की पूरी सूचना के साथ सम्पर्क करें।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षित अनेक ध्यान-प्रशिक्षक इस कार्य में सेवा के लिए तैयार हैं। ये ध्यान-प्रशिक्षक आपके जनपद के निकट भी उपलब्ध हो सकते हैं। आयोजकों को कार्यक्रम हेतु स्थान, बैठक-व्यवस्था, आवश्यक हो तो माईक आदि की व्यवस्था, प्रशिक्षक के निवास, भोजन, आवागमन यात्रा आदि की व्यवस्था करनी होगी।

सम्पर्क-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षण योजना, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, ३०५००१, दूरभाष-०१४५-२४६०१६४, ईमेल-psabhaa@gmail.com

ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर

१३ से २० अप्रैल, २०१४, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर। अधिकतम संख्या-५०। मात्र पूर्व पञ्जीकृत प्रतिभागियों के लिए। इसमें विद्वद् गोष्ठी द्वारा निर्धारित आर्यसमाज की ध्यान पद्धति का प्रशिक्षण दिया जायेगा व ध्यान करवाने का अभ्यास भी करवाया जायेगा। लिखित एवं प्रायोगिक परीक्षा के बाद योग्य व्यक्तियों को परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षक-प्रमाण पत्र भी दिये जायेंगे। शिविर शुल्क १००० रु. है। १३ अप्रैल सायं ४ बजे तक पहुँचना अनिवार्य है। विलम्ब से आने वालों की शिविर में सहभागिता नहीं हो पायेगी। शिविर का समापन २० अप्रैल को सायं ५ बजे तक हो जायेगा। इच्छुक व्यक्ति, कृपया सम्पर्क करें-९४१४००३७५६, समय-मध्याह्न १.३० से २.३०।

पता-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर, परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर, राज. ३०५००१। ईमेल-psabhaa@gmail.com

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

www.thearyasamaj.org

।।ओ३म्।।

अलग-अलग स्तरों में योग-साधना शिविर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि-उद्यान, अजमेर में वर्षों से अब तक योग्य आचार्यों द्वारा योग-साधकों का निर्माण करने के लिए वर्ष में दो बार योग से सम्बन्धित व ध्यान से सम्बन्धित शिविरों का आयोजन किया जाता रहा है और साधकों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास किया जाता रहा है। समाज में और अधिक योग्य व आदर्श साधकों की आवश्यकता अनुभव करते हुए इस वर्ष जून मास के शिविर में नवीन पाठ्यक्रम की विधि अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) के दो शिविर लगाये जा चुके हैं। यह शिविर ध्यान से सम्बन्धित, ईश्वर-जीव-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जानने से सम्बन्धित, योगदर्शन व सांख्यदर्शन के कुछ प्रमुख विषयों के सूत्रों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर योगदर्शन व सांख्यदर्शन को जानने-समझने से सम्बन्धित, आत्मनिरीक्षण में कुछ नये विषयों को सूक्ष्मता से समझने से सम्बन्धित, दिनचर्या को अनुशासित व सात्त्विक बनाने से सम्बन्धित तथा विभिन्न सैद्धान्तिक व व्यावहारिक विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित प्रारम्भिक स्तर के योग के इच्छुक साधकों के लिए लगाया गया। इस योग-साधना शिविर को आगामी वर्षों में चतुर्थ स्तर तक लगाने की योजना बनाई गई है। प्रारम्भिक स्तर से लेकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्तर तक के शिविरों में पूर्व सूचित पाठ्यक्रमित विषयों में अधिक से अधिक सूक्ष्मता, दिनचर्या में और अधिक अनुशासन व सात्त्विकता, आहार-शुद्धि से लेकर मन, आत्मा की शुद्धि पर्यन्त अनुभवात्मक स्तर पर योग-साधकों को ज्ञान करवाया जाएगा। प्रत्येक स्तर के साधकों को उनके सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से सम्बन्धित तथा उनके व्यक्तिगत आचरण व अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए परीक्षा-पद्धति के माध्यम से प्रथम-श्रेणी व उच्च प्रथम-श्रेणी के प्रमाण-पत्र दिए जायेंगे। इस प्रकार की विधि से योग्य साधकों को समाज में सम्मान मिलेगा तथा वे और अधिक उत्साह से समाज व देश के कल्याण के लिए कार्यरत होंगे, उन्हें देखकर अन्य साधक भी प्रेरित होंगे।

परोपकारिणी सभा व गुरुकुल ऋषि उद्यान के योग्य आचार्यों व संयोजकों द्वारा नवनिर्मित इस योजना के प्राथमिक स्तर में पर्याप्त उपलब्धि हुई है। भविष्य में इस योजना में आप सब के सहयोग की आवश्यकता है।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अतः सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं**। अतः लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें**। लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। -संपादक

www.thearyasamaj.org

उपनयन संस्कार क्यों करायें?

- कन्हैयालाल आर्य

उपनयन संस्कार इसलिए किया जाता है कि इसके बाद बालक या बालिका के वेदादि शास्त्रों का अध्ययन प्रारम्भ किया जा सके। आजकल की भाषा में 'शिक्षा का प्रारम्भ' करना है। उपनयन संस्कार में मुख्य कर्म यज्ञोपवीत का धारण करना है। जो लोग अपनी सन्तान को सुसंस्कृत तथा गुणवान् बनाना चाहते हैं उनकी सन्तान का उपनयन जल्दी से जल्दी हो जाना चाहिए।

महर्षि दयानन्द सरस्वती संस्कार विधि में महर्षि मनु का उद्धरण प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं-

ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे।
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे।।

अर्थात् जिनको शीघ्र विद्या, बल और व्यवहार करने की इच्छा हो और बालक भी पढ़ने में समर्थ हुए हों, तो ब्राह्मण बनने के इच्छुक लड़के का जन्म व गर्भ से पाँचवें, क्षत्रिय बनने के इच्छुक लड़के का जन्म व गर्भ से छठे और वैश्य बनने के इच्छुक लड़के का जन्म व गर्भ से आठवें वर्ष में यज्ञोपवीत करें।

महर्षि मनु ने उपनयन की अन्तिम अवधि इस प्रकार की है- सोलह वर्ष तक ब्राह्मण का, बाईस वर्ष तक क्षत्रिय का निर्धारित समय पर संस्कार न होने पर श्रेष्ठ व्यक्तियों द्वारा निन्दित तथा पतित माने जावें।

यज्ञोपवीत या उपनयन संस्कार का आज भी इतना महत्त्व है कि जिनका यज्ञोपवीत संस्कार नहीं होता उनका विवाह से पहले नाममात्र का यज्ञोपवीत संस्कार कर दिया जाता है ताकि यह न कहा जा सके कि इनका यह संस्कार नहीं हुआ। प्राचीन काल में यज्ञोपवीत संस्कार को एक सार्वजनिक संस्कार बनाने का एक मुख्य कारण यह भी था कि हर किसी बालक के माता-पिता को मान प्रतिष्ठा रखने के लिए सबके सामने यह प्रकट करना पड़ता था कि उसका बच्चा अब आचार्य के पास विद्याध्ययन करने के लिए जाने लगा है। जो व्यक्ति अपनी सन्तान का यह संस्कार नहीं करता था वह समाज में पतित समझा जाता था। इसी विचारधारा का यह परिणाम था कि सब कोई उपनयन करवाते थे। जो यज्ञोपवीत संस्कार नहीं करवाता था, वह 'सावित्री पतित' कहलाता था।

यज्ञोपवीत को परम पवित्र कहा गया है। पारस्कर गृह्य सूत्र में कहा है:-

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।।
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।।

यह ब्रह्मसूत्र अत्यन्त पवित्र है जो पूर्वकाल से चला आता है। प्रजापति के साथ ही आदिकाल से वर्तमान है। यह आयु का देने वाला है, जीवन में आगे ही आगे ले जाने वाला है। यह यज्ञोपवीत निर्मल है जो बल को, तेज को देने वाला है। हे बालक! तू यज्ञोपवीत है तुझे यज्ञोपवीत से अपने समीप लाता हूँ।

यज्ञोपवीत आलंकारिक तौर पर आचार्य तथा शिष्य को एक दूसरे के साथ बान्धने का प्रतीक है तभी इसे निकट ले जाने वाला कहा।

महर्षि मनु ने यज्ञोपवीत का धारण करना अनिवार्य बतलाया है। यज्ञोपवीत को वैदिक संस्कृति के चिह्न के रूप में भी धारण किया जाता है। यज्ञ करने से पूर्व प्रत्येक व्यक्ति को अनिवार्य रूप से यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए अन्यथा वह यज्ञ करने का अधिकारी नहीं है। ऐतरेय आरण्यक में ऋषि कहता है

यज्ञोपवीती एव अधीयीत यजेत,
याजयेत वा यज्ञस्य प्रसृत्यै।

वैदिक संस्कृति में तीन प्रकार है- शिखा, सूत्र तथा सन्ध्या। इन तीनों का पालन् करना वैदिक संस्कृति में अनिवार्य है तभी व्यक्ति आर्य कहलाने का अधिकारी होता है।

यज्ञोपवीत में तीन सूत्र (धागे) होते हैं जो क्रमशः तीन ऋणों के सूचक है-

(१) ऋषि ऋण (२) पितृ ऋण (३) देव ऋण।

प्रथम ऋण ब्रह्मचर्य धारण कर वेद विद्या के अध्ययन से, द्वितीय ऋण धर्मपूर्वक गृहस्थाश्रम में प्रवेश कर सन्तानोत्पति से तथा तृतीय ऋण गृहस्थ का त्याग कर देश सेवा के लिए अपने को तैयार करने से निवृत्त होते हैं, इसलिए ये तीनों ऋण ब्रह्मचर्य, गृहस्थ तथा वानप्रस्थ इन तीनों आश्रमों के सूचक हैं। यही कारण है जब व्यक्ति इन तीनों ऋणों से मुक्त हो जाता है, तीनों आश्रमों को लांघ जाता है तब इस सूत्र को विधान के अनुसार त्याग देता है फिर इसे धारण नहीं करता और संन्यासाश्रम में प्रविष्ट हो जाता है।

यज्ञोपवीत गले पर पहनकर दांये हाथ को इसके नीचे से निकाला जाता है इस प्रकार यह हृदय का भी स्पर्श करता है। किसी भी भार को उठाने के लिए उसे कन्धों पर धारण करना ही कहा जाता है। इस भार को व्यक्ति तभी

www.thearyasamaj.org

उठा सकता है जब उस का हृदय स्वीकार कर ले। यज्ञोपवीत यह बतलाता है कि हम अपने कर्त्तव्य को पालने के लिए हृदय से स्वीकार करते हैं।

क्या स्त्रियाँ भी यज्ञोपवीत पहन सकती हैं?

कुछ पोंगा पण्डितों और तथाकथित धर्म के ठेकेदारों ने यह भ्रान्त धारणा फैला दी कि स्त्रियों को यज्ञोपवीत पहनने का अधिकार नहीं है। अभी भी कुछ पुरुष छह धागों का यज्ञोपवीत पहिनते हैं। ऐसा वे इसीलिए करते हैं कि तीन धागों का तो पुरुष का यज्ञोपवीत और तीन धागों का उसकी पत्नी का। ऐसा वे लोग करते हैं जो अभी भी स्त्रियों के लिए यज्ञोपवीत का विधान नहीं मानते। यह एक भ्रान्त धारणा है। पति-पत्नी दोनों को ही यज्ञोपवीत पहिनना चाहिए। यह एक शुभ कर्म है, वेद की आज्ञा है, फिर इस वेद की आज्ञा से स्त्रियों को कैसे वन्चित किया जा सकता है। यज्ञोपवीत का सम्बन्ध विद्या से है और विद्या का अधिकार सब को है। मध्यकाल में नारी जाति के यज्ञोपवीत तथा वेदाध्ययन पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। यह तो महर्षि दयानन्द की कृपा है कि उन्होंने नारी जाति को पुन: यज्ञोपवीत पहिनने तथा वेद पढ़ने का अधिकार दिलाया है आज गुरुकुलों में हजारों ब्रह्मचारिणियाँ यज्ञोपवीत धारण करती हैं तथा वेद भी पढ़ रही हैं। स्वयं महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने उत्तर प्रदेश में ठाकुर विक्रम सिंह जी की ताई का यज्ञोपवीत कराया था।

वैदिक संस्कृति में कन्याओं को यज्ञोपवीत धारण करने का वैसा ही अधिकार था जैसा बालकों को। दूसरी बात यह है कि वैदिक काल में स्त्रियाँ वेद शास्त्र पढ़ा करती थी। गोभिलीय गृह्यसूत्र में लिखा है-

प्रावृतां यज्ञोपवीतिनीम् अभ्युदानयत्
जपेत सोमोऽददत् गन्धर्वाय इति

अर्थात् कन्या को कपड़ा पहिने हुए, यज्ञोपवीत धारण किए पति के निकट लाये तथा यह मन्त्र पढ़ें- **'सोमोऽददत्'**। इस मन्त्र में स्पष्ट है कि कन्या यज्ञोपवीत धारण किए हुए हो। कन्याओं का उपनयन संस्कार होता था। यह निम्न श्लोक से भी स्पष्ट है :-

पुराकल्पे हि नारीणां मौञ्जी बन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्री वाचनं तथा।।

अर्थात् प्राचीन काल में स्त्रियों का मौञ्जीबन्धन=उपनयन संस्कार होता था, वे वेदादि शास्त्रों का अध्ययन-अध्यापन किया करती थी।

कादम्बरी महाकाव्य में महाकवि बाणभट्ट ने महाश्वेता का वर्णन करते हुए लिखा है:-

'ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकायाम्' अर्थात् जिसका शरीर ब्रह्मसूत्र के धारण के कारण पवित्र था। ब्रह्मसूत्र यज्ञोपवीत का ही दूसरा नाम है। ब्रह्मसूत्र का अर्थ सूत्रग्रन्थों तथा संस्कृत के कोषों में यज्ञोपवीत किया गया है। इसे ब्रह्मसूत्र, यज्ञसूत्र, यज्ञोपवीत आदि अनेक नामों से स्मरण किया जाता है।

परन्तु खेद की बात है कि मध्यकाल में हमारे पोंगा पण्डितों ने वेद के अनर्गल अर्थ बताने शुरू कर दिये। इसका दुष्प्रभाव यह हुआ कि हम अपने मूल सिद्धान्तों के प्रति उपेक्षा भाव करने लगे। इसके अतिरिक्त मुसलमानों के शासन काल में बलपूर्वक वैदिक संस्कृति को नष्ट करने के कुप्रयास भी किए गए। मुस्लिम शासकों ने असंख्य लोगों की चोटियाँ कटवाई, यज्ञोपवीत उतरवाये और कई क्रूर शासकों ने यज्ञोपवीत न उतारने वालों को मौत के घाट उतार दिया। इस प्रकार यज्ञोपवीत धारण करने का प्रचलन धीरे-धीरे बन्द होने लगा और ब्राह्मणों ने भी यज्ञोपवीत पहिनने का सम्पूर्ण अधिकार अपने पास रख लिया। इतिहास में ऐसा आता है कि शिवाजी महाराज को भी यज्ञोपवीत पहिनाने से ब्राह्मणों ने इंकार कर दिया और बहुत अधिक दक्षिणा प्राप्त करने पर उन्हें यज्ञोपवीत तो धारण करा दिया गया परन्तु गायत्री का उपदेश उसे फिर भी नहीं दिया गया। परन्तु सौभाग्य की बात है कि आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आकर न केवल स्त्रियों को यज्ञोपवीत पहिनने का अधिकार ही दिलाया बल्कि वेद पढ़ने-पढ़ाने का अधिकार भी दिया। आज पाश्चात्य सभ्यता के कारण हमारे युवक-युवतियाँ अच्छे संस्कारों से विमुख होते जा रहे हैं। आज वह त्यागपूर्वक भोग करने के स्थान पर भोगवादी प्रवृत्ति को अपना रहे हैं। आज आवश्यकता है नवयुवकों-नवयुवतियों में अच्छे संस्कारों की। यज्ञोपवीत संस्कार इनमें एक प्रमुख एवं अति महत्त्वपूर्ण संस्कार है। अत: विद्या अध्ययन के प्रतीक के रूप में तथा वैदिक संस्कृति के चिह्न रूप में सभी नर-नारियों को यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए।

४/४५, शिवाजी नगर, गुड़गाँव, हरियाणा

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ और विद्वानों के संग से परोपकार की सिद्धि और कामना को पूर्ण करने वाली वेदवाणी को प्राप्त होकर आनन्द में रहें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.१०

योगी लोग मधुर प्यारी वाणी से योग सीखने वालों को उपदेश करें और अपना सर्वस्व योग ही को जानें तथा अन्य मनुष्य वैसे योगी का सदा आश्रय किया करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.११

www.thearyasamaj.org

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

www.thearyasamaj.org

अतिथि यज्ञ के होता
(१६ से ३० नवम्बर २०१३ तक)

१. श्रीमती कमला आर्य, जोधपुर, २. श्री पुष्पा सोनी, पाटन, गुजरात ३. श्रीमती केसर देवी, जयपुर, ४. श्री जी.के. शर्मा, किशनगढ़, अजमेर, ५. श्री सत्येन्द्र बालोत, जोधपुर, ६. श्री विरेन्द्र बालोत, जोधपुर, ७. श्री कर्नल जीत सिंह, नोएड़ा, ८. श्री मृत्युञ्जय, अजमेर, ९. श्री अनिल गुप्ता, राँची, झारखण्ड, १०. श्रीमती निर्मला देवी, अजमेर, ११. श्री राजेश आर्य, गुड़गाँव, १२. श्री स्वास्तिकाम: चेरिटेबल ट्रस्ट, अमरावती, महाराष्ट्र १३. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, अजमेर।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगत अतिथियों को नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता
(१६ से ३० नवम्बर २०१३ तक)

१. श्री अवनीश कपूर, दिल्ली, २. श्री रजनीश कपूर, दिल्ली ३. श्रीमती कमला आर्या, जोधपुर, ४. श्रीमती पुष्पा सोनी, पाटन, गुजरात ५. श्रीमती सुशीला मित्रा, मेरठ, ६. दृष्टि झँवर, ब्यावर, अजमेर, ७. श्रीमती सुशीला, जोधपुर ८. श्री मनीश दुबे, कानपुर, उ.प्र., ९. श्री कर्नल जीत सिंह, नोएड़ा १०. श्री श्याम गिल, अजमेर, ११. श्री रमेश कुमार, अजमेर, १२. श्री जयकिशन तोषनिवाल, अजमेर, १३. श्रीमती तुलसी बाई, अजमेर, १४. श्री शशांक कौशिक, फरीदाबाद, हरियाणा, १५. श्री अमरित गर्ग, फरीदाबाद, हरियाणा, १६. श्री शैलेष मोरवाल, अजमेर, १७. श्री अशोक तिवारी, अजमेर, १८. कृष्णा कुमारी आर्या, नोएड़ा, उ.प्र., १९. श्रीमती ग्यारसी देवी आर्या, उदयपुर, २०. श्री ब्रह्मप्रकाश यादव, उदयपुर, २१. श्री विजय नारायण, रेवाड़ी, हरियाणा, २२. श्री रामचन्द्र वर्मा, अजमेर।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

सत्यार्थ प्रकाश प्रचार निधि
(१ से ३० नवम्बर २०१३ तक)

१. श्री सुबेदार करतारसिंह, सोनीपत, हरियाणा, २. श्री ध्यानेन्द्र मुनि, लखनऊ, ३. श्री रामभज मदान, नई दिल्ली, ४. श्री चेतराम आर्य, रेवाड़ी, हरियाणा, ५. आर्यसमाज, आकोला, महाराष्ट्र, ६. श्री विरदीचन्द गुप्त, जयपुर, ७. श्री ओमप्रकाश, रोहतक, हरियाणा ८. मैसर्स जैनिथ एन्टरप्राइजेज, नई दिल्ली, ९. श्री चन्द्रप्रकाश देवड़ा, जोधपुर, १०. मन्त्री अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेद पीठ, ११. श्रीमती विमलेश पवन आर्य, मुजफ्फरनगर, उ.प्र., १२. मास्टर राजेन्द्र सिंह, बीघल, हरियाणा, १३. श्री अमृत वैश्य, लखनऊ, १४. श्री जगदेव कुमार, सोनीपत, हरियाणा, १५. डॉ. सुशील मिगलानी, अबोहर, पंजाब।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

सभाध्यक्ष को चाहिये कि सूर्य्य और चन्द्रमा के समान श्रेष्ठ गुणों को प्रकाशित और दुष्ट व्यवहारों को शान्त कर के श्रेष्ठ व्यवहार से सज्जन पुरुषों को आह्लाद देवे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.१६

www.thearyasamaj.org

भारतीय संस्कृति में ऋत व सत्य

- ब्र. राजेन्द्रार्यः

भारतीय संस्कृति में सर्वत्र ऋत एवं सत्य की महिमा का गान किया गया है। प्राचीन ऋषियों, दार्शनिकों, चिन्तकों एवं वैज्ञानिकों ने भी इन्हीं ऋत एवं सत्य सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार के लिए यत्न किये हैं। संस्कृत में उपलब्ध समस्त वैदिक वाङ्मय में ये दोनों शब्द अनेकशः प्रयुक्त हुए हैं। हम अपने दैनिक जीवन में सत्य-असत्य, सार्वभौम सत्य, वैज्ञानिक सत्य इत्यादि शब्दावली का प्रचुरता से प्रयोग करते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे राष्ट्रनायकों ने ''सत्यमेव जयते'' इस उपनिषद् वाक्य को राष्ट्रीय चिह्न नोटों तथा सिक्कों आदि में प्रतिष्ठित किया है। वस्तुतः सत्य हमारी राष्ट्रीय संस्कृति व जीवन का लक्ष्य है। इस अद्भुत चित्र-विचित्र, विविधता भरी सृष्टि में संभवतः मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जो सत्य का जिज्ञासु, अन्वेषक तथा सत्य प्राप्ति का अधिकारी है। आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के युग में वह नित्य नवीन सत्यों का उद्घाटन करता जा रहा है तथा अपने जीवन को विकसित करने, सुख, शान्ति और प्रगति के मार्ग की खोज करने में अहर्निश लगा हुआ है। सत्यासत्य के निर्णय की इस विशिष्ट क्षमता के कारण ही वह सृष्टि के अन्य प्राणियों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ माना जाता है। संस्कृत साहित्य में **''न मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्।''** महाभारत (=अर्थात् मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है) इस भावना का उद्घोष किया गया है। उपनिषदों के '**न हि सत्यात्परो धर्मः**' तथा '**न हि सत्यात्परं ज्ञानम्**' इन वचनों के अनुसार सत्य-धर्म और ज्ञान एक ही अर्थ के वाचक हैं। संस्कृत के 'अस भुवि' इस धातु से 'सत्' शब्द निष्पन्न होता है। 'सते हितम्' अथवा 'सत्-यत्'- इस व्युत्पत्ति से 'सत्य' का तात्पर्य 'यथार्थ' से है। वस्तुतः पदार्थों के यथार्थ ज्ञान को सत्य कहते हैं। गीता में '**तत्त्वज्ञानार्थदर्शनं ज्ञानम्**'(१३/११) अर्थात् तत्त्व ज्ञान के विषयों (प्रकृति, पुरुष (=ईश्वर) व जीवात्मा के साक्षात्कार को 'ज्ञान' के रूप में परिभाषित किया गया है। जो वस्तु जैसी हो उसका वैसा ही कथन सत्य कहाता है।

प्राचीन भारतीय मनीषियों ने मानव जीवन के लिए जहाँ पुरुषार्थ चतुष्टय (=धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष) का वर्णन किया है, वहीं इनकी प्राप्ति में संसार के यथातथ्य ज्ञान (सत्य व ऋत) को भी आवश्यक बतलाया है। क्योंकि '**शुभेन कर्मणा सौख्यं दुखम् पापेन कर्मणा**' (=अर्थात् शुभ कर्मों से सुख व अशुभ कर्मों से दुःख होता है।) भारतीय दर्शनों में आचार्य कपिल ने '**ज्ञानान्मुक्तिः**' (सांख्यदर्शन ३/२३) तथा आचार्य शंकर ने '**सा विद्या या विमुक्तये**' द्वारा दुःख निवृत्ति हेतु ज्ञान की अनिवार्यता प्रतिपादित की है। सामान्यतः मानव जीवन का सारा प्रयास भौतिक सुखों की प्राप्ति में ही लगा रहता है। परन्तु तात्त्विक दृष्टि से विवेचन करने पर यह सिद्ध होता है कि हम भौतिक सुखों के अतिरिक्त आध्यात्मिक आनन्द की प्राप्ति भी करना चाहते हैं, जिसे शास्त्रीय दृष्टि में निःश्रेयस् अर्थात् शाश्वत सुख भी कह सकते हैं। मनुष्य में कैवल्य प्रवृत्ति (=सुख प्राप्ति) तथा दुःख निवृत्ति का स्वभाव सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। फिर भी चाहना मात्र से न कोई सुखी होता है और न कोई दुःखी। अतः सुख प्राप्ति हेतु संसार विषयक पदार्थ ज्ञान व आचार विषयक सामाजिक ज्ञान आवश्यक हो जाता है। वेदों में भी दो प्रकार के सत्यों की सर्वत्र उद्भावना की गई है। एक जो प्रकृति से सम्बन्धित है तथा विज्ञान का विषय है, यही 'ऋत' है इसे ही अपराविद्या या प्राकृतिक नियम कहते हैं तथा दूसरी जो इससे भिन्न आत्मा-परमात्मा, आचार विषयक सामाजिक सत्य या ज्ञान है उसे परा विद्या कहते हैं। सामाजिक सत्यों के द्वारा मानव समाज को अनुशासित किया जाता है तथा प्राकृतिक सत्य सम्पूर्ण सृष्टि के सञ्चालन को स्वयं अनुशासित करते हैं। सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में इन ऋतों (=प्राकृतिक नियमों) की विशद् व्याख्या उपलब्ध है। प्रमाण स्वरूप वेद के एतद्विषयक कुछ मन्त्र उद्धृत हैं-

'ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृत द्विषः।'

-ऋग्वेद ७/६६/१३

अर्थात् सुख व ऐश्वर्य हेतु मनुष्य को 'ऋतावान' अर्थात् ऋताचारी (=प्राकृतिक नियमों के अनुकूल आचरण करने वाला), 'ऋतजाता' = प्राकृतिक नियमों से उत्पन्न, 'ऋतावृधो' =ऋतों का विस्तार करने वाला तथा अनृत का घोर विरोध करने वाला होना चाहिए।

उपर्युक्त मन्त्र से स्पष्ट है कि मानव को सृष्टि के नियमों की जानकारी होनी चाहिए तथा मानव समाज के उत्थान के लिए सामाजिक विधान ईश्वरीय विधान के अनुकूल होना चाहिये।

स्वामी दयानन्द सरस्वती अपने वेद भाष्य में ऋतम् एवं सत्यम् की व्याख्या करते हुए लिखते हैं-

ऋतम्- यथार्थं सर्वविद्याऽधिकरणं वेदशास्त्रम् ऋतस्य प्राप्तसत्यस्य, सर्वविद्यायुक्तस्य वेदचतुष्टस्य सनातनस्य जगत् कारणस्य वा।

www.thearyasamaj.org

सत्यम्- यद् वेदविद्यया, प्रत्यक्षादिभिः विदुषां सङ्गेन सुविचारणाऽत्मशुद्धया वा निर्भ्रमं, सर्वहितं, तत्त्वनिष्ठं सत्यप्रभवं सम्यक् परीक्ष्य निश्चीयते तत्।

सामान्यतः ऐसा माना जाता है कि अमुक वैज्ञानिक ने अमुक सत्य नियम की खोज की तथा उन नियमों के साथ उसका नाम भी जुड़ जाता है परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने पर यह पता चलता है कि ये वैज्ञानिक तो इन नियमों को खोज निकालने वाले अन्वेषक मात्र हैं बनाने वाले नहीं। विज्ञान के नियम तो शाश्वत सत्य हैं तथा अनादि काल से सृष्टि रचना के साथ कार्य कर रहे हैं। इसी वैज्ञानिक सत्य रहस्य का उद्घाटन वेद में इस प्रकार किया गया है-

''देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति।''

-अथर्ववेद १०/८/३२

अर्थात् सृष्टि के अन्तर्गत कार्यरत नियम न कभी नष्ट होते हैं और न कभी पुराने पड़ते हैं।

''ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत''

ऋग्. १०-१९०/१

अर्थात् ऋत व सत्य परमात्मा के तप से पैदा हुए। वस्तुतः सृष्टि का संचालन जिन नियमों के आधार पर हो रहा है उन सब का आदिमूल परमेश्वर है सृष्टि में सर्वत्र प्रयोजन, व्यवस्था, नियमबद्धता आदि जो दिखलाई पड़ रही है उसका किसी चेतन सत्ता की योजना के बिना जड़मय भूत तत्त्वों द्वारा स्वयमेव सम्पन्न होना सर्वथा असम्भव है। **'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे'** शरीर की भाँति ही एक-एक फूल पत्ती में- यहाँ तक कि एक-एक परमाणु की संरचना में हमें विचित्र रचना कौशल के दर्शन होते हैं। प्रसिद्ध लेखक फिलण्ट का कथन है कि ''यदि यह माना जाये कि प्रकृति के परमाणुओं ने स्वयमेव मिलकर इस विचित्र एवं दुरुह सृष्टि की रचना कर ली, तो यह भी मानना होगा कि शेक्सपीयर के नाटकों की रचना अंग्रेजी भाषा की वर्णमाला के अक्षरों ने उछल-उछल कर स्वयं कर डाली है। इस नाम से प्रसिद्ध किसी नाटककार-चेतन प्राणी का इसमें कोई हाथ नहीं।''

साक्षात्कृतधर्मा ऋषियों एवं भारतीय मनीषियों के मतानुसार संसार सप्रयोजन व सत्य है। सृष्टि रचयिता की सम्पूर्ण कलात्मक कृति में ज्यों-ज्यों मनुष्य, सृष्टि के इन ऋतों को जानता जायेगा, वैसे-वैसे वह इन नियमों के कुशल नियामक के अस्तित्व की आत्मानुभूति तथा समाज के सुख समृद्धि में वृद्धि करता जायेगा। वेद के शब्दों में-

यो विद्यात् सूत्रं विततं यस्मिन्नोताः प्रजा इमाः।
सूत्रं सूत्रस्य यो विद्यात् स विद्याद् ब्राह्मणं महत्।।

-अथर्ववेद १०/८/३६

अर्थात् ''जो जानता है उस सूत्र को जिसमें सृष्टि की सारी प्रजा पिरोई हुई है और जानता है सूत्र के भी सूत्र को वह महान् ब्रह्म को जानता है।''

वस्तुतः हमारा यह शरीर व सृष्टि तथा इसकी सम्पूर्ण रचना इतनी सुसंगत व बुद्धि पूर्वक निर्मित है कि यह किसी महान् कलाकार की अपूर्व कृति मालूम पड़ती है। सृष्टि के प्रत्येक पद व पदार्थ हमारे शरीर से पूरी तरह सम्पृक्त हैं तथा हम भी सूर्य, चन्द्र, तारे, गृह, नक्षत्र, अन्तरिक्ष, पृथिवी, समुद्र तथा वनस्पतियों से जुड़े हुय हैं। पिण्ड से ब्रह्माण्ड तक सर्वत्र कोई न कोई अटूट नियम कार्य कर रहा है जो सम्पूर्ण सृष्टि को **''सूत्रे मणिगणा इव''** सूत्र में मणियों की तरह पिरोये हुये हैं। संसार में इन्हीं शाश्वत नियमों के अस्तित्व को देखकर आधुनिक वैज्ञानिक आश्चर्य चकित हैं। विश्व विख्यात वैज्ञानिक जेम्स जीन्स ने कहा है-

"The universe is more like a great thought than a great machine." The mysterius universe P. 148

अर्थात् 'यह संसार एक महान् मशीन की अपेक्षा एक महान् विचार के समान है।'

सृष्टि की इस ज्ञानमूलक रचना कौशल व ऋतों की स्थिति का ज्ञान ही वेदान्त में-**''अथातो ब्रह्म जिज्ञासा''** का स्फुरण करती प्रतीत होती है। अथर्ववेद मन्त्र १२/१/१ में-

सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।

अर्थात् महान् सत्य व ऋत पृथिवी को धारण करने वाले हैं। इसीलिए यजुर्वेद में मनुष्यों के लिए कहा गया है-**''ऋतस्य पन्था प्रेत''** -यजुर्वेद ६/४५

अर्थात् सत्य और पवित्र मार्ग पर चलो। कठोपनिषद् में जीवात्मा और परमात्मा दोनों को ऋतों का पान करने वाला बतलाया गया है।

ऋतं पिबन्तौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमे परार्धे।
छाया तपौ ब्रह्मविदो वदन्ति पञ्चाग्नयो ये च त्रिणाचिकेता।।

-कठोपनिषद् १-३

'ऋत' का अर्थ है सत्य अथवा नियत व्यवस्था। जीवात्मा व्यवस्थापूर्वक कृत कर्मों का फल भोगता और आगे कर्मानुष्ठान में लगा रहता है- यह उसका ऋतपान है। परमात्मा अपनी व्यवस्था के अनुसार विश्व की उत्पत्ति, पालन और लय आदि में संलग्न रहता है- यह परमात्मा का ऋतपान है। जीवात्मा का कार्यक्षेत्र देहमात्र है और ब्रह्म का समस्त विश्व। ऋत एवं सत्य के पालन से ही वैदिक समाजवाद का विकास होता है। जब समाज में व्यक्तियों का आपस में व्यवहार सत्याचरण से युक्त नहीं रहता तब श्रद्धा, प्रेम और विश्वास की भावना समाप्त प्रायः होने लगती है। ऋग्वेद में ऋत के स्वरूप व शक्ति का वर्णन मिलता

www.thearyasamaj.org

है-

ऋतस्य हि शुरुधः सन्तिपूर्वीः ऋतस्यधीर्ति वृजनानि हन्तिः।
ऋतस्यश्लोको बधिरा ततर्दः कर्णाबुधानः शुचमान आयोः।।

-ऋग्वेद ४/२३/८

अर्थात् ऋत की दुःख निवारक उपलब्धियाँ शाश्वत हैं, ऋतों का धारण करना पापों (दुर्गुणों) का नाश करने वाला है। ऋतों को जगाने वाली पवित्र आवाज बहिरे मनुष्य के कानों में भी सुनाई पड़ती है।

यजुर्वेद में सत्यासत्य का भेद बतलाया गया है-

दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत् सत्यानृते प्रजापतिः।
अश्रद्धामनृतेदधात् श्रद्धां सत्ये प्रजापतिः।।

-यजुर्वेद १९/६६

अर्थात् इस जगत् में प्रजापति ने असत्य और सत्य का भेद करके श्रद्धा को सत्य में स्थापित किया और अश्रद्धा को असत्य में स्थापित किया।

संसार में यह प्रत्यक्ष दिखायी पड़ता है कि मनुष्य ऋत एवं सत्य की चाहे जितनी अवहेलना करे, अन्ततः उसे सच्चाई को ही स्वीकार करना पड़ता है। महाभारत में आया है-

नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटि शतैरपि।
अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।।

अर्थात् 'शुभ या अशुभ कैसा ही हो, किये हुए कर्म का फल भोगना ही पड़ता है। करोड़ों कल्प बीत जाने पर भी बिना भोगे उनका क्षय नहीं होगा।'

ऐसा देखने में आता है कि बड़े-बड़े कुख्यात अपराधियों के मुख-मण्डल में सत्य की ज्योति उनके पश्चाताप व लज्जा के भाव से प्रदर्शित हो जाती है। आधुनिक भौतिकवादी सभ्यता की अस्वाभाविक व अप्राकृतिक जीवन शैली से उत्पन्न शारीरिक व मानसिक व्याधियों ने पुनः समाज को प्राकृतिक जीवन पद्धति, प्राकृतिक चिकित्सा, आयुर्वेद तथा योग की ऋत शैली को अपनाने के लिए विवश कर दिया है। आयुर्वेद के प्राचीन आचार्य चरक ने अपने चिकित्साशास्त्र में ''हितभुक्, मितभुक् ऋतभुक्'' को प्रमुख स्थान दिया है। गीता के-

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।

-गीता ६/१७

इस वचन का यही अभिप्राय है कि जिसका आहार विहार नियमित है, कर्मों का आचरण नपा तुला है और सोना जागना परिमित है उसी को यह योग दुःखनाशक अर्थात् सुखावह होता है, यही ऋत एवं शाश्वत सत्य सिद्धान्त है।

वैदिक वाङ्मय में ऋत पद अनेक अर्थों में प्रयोग किया गया है। ऋत का अति महत्त्वपूर्ण अर्थ सृष्टि का शाश्वत नियम है। इस नियम पर सृष्टि के पदार्थ कार्य कर रहे हैं। यह नियम अटूट है। इस नियम का प्रवर्तक होने से ईश्वर को **''ऋतस्य गोपाः''** अर्थात् शाश्वत नियम का पालक कहा जाता है। ऋत के अध्ययन से विविध विद्यायें प्रकाश में आती हैं। वेद ऋत का अध्ययन है और परमेश्वर प्रदत्त ब्रह्माण्ड का ज्ञान है।

भारतीय संस्कृति मानव जीवन को आदर्शमय बनाने के लिए अभ्युदय और निःश्रेयस् की प्राप्ति पर बल देती है तथा वह यह भी शिक्षा देती है कि हमें सत्य का उपासक होना चाहिए। सत्य के पालन से ही परिवार, समाज व राष्ट्र में सुख-शान्ति एवं प्रगति की समृद्धि होती है। भौतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति में सम्यक् समन्वय के लिए ऋतों के साथ-साथ सत्य की जानकारी भी आवश्यक है।

वेदादिशास्त्रों में सामाजिक व आचारपरक सच्चाईयों को धर्माचरण (=सदाचार) के रूप में अभिहित किया गया है। महर्षि मनु ने मानव धर्मशास्त्र में-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्यासत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

-मनु. ६/१२

इत्यादि आचार परक सत्यों को धर्म के लक्षण रूप में परिभाषित किया गया है तथा धर्म, न्याय, सदाचार सभी के मूल में सत्य ही स्थित है। सत्य हमारे जीवन के हर क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। इसीलिए स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने वैचारिक क्रान्तिकारी ग्रन्थ ''सत्यार्थप्रकाश'' की भूमिका में लिखा- ''मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है, तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है।''

उन्नीसवीं शताब्दी के महान् समाज सुधारक, राष्ट्रभक्त, धर्मोपदेशक, वैदिक संस्कृति के परमोपासक महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन सत्य से ओत-प्रोत था। अजमेर से जोधपुर जाते समय स्वामी दयानन्द के हितचिन्तकों ने अनिष्ट की आशंका को देखते हुए महाराज से हाथ जोड़कर प्रार्थना की, कि भगवन् वह मूल राक्षस का देश है, वहाँ न जाइए, इस पर महाराज (सत्यनिष्ठ स्वामी दयानन्द सरस्वती) ने कहा- ''यदि लोग हमारी अंगुलियों की बत्तियाँ बनाकर जला दें तो भी कोई चिन्ता नहीं, मैं वहाँ जाकर अवश्य सत्योपदेश करूँगा।''

प्राचीन ऋषियों ने सत्यासत्य की परीक्षा के लिए अनेक कसौटियाँ निर्धारित की हैं तथा उन प्रमाणों से सिद्ध व सुपरीक्षित तथ्यों को ही सत्य माना है। न्यायदर्शन के प्रणेता महर्षि गौतम ने सत्य की परख व सिद्धि हेतु प्रत्यक्ष,

www.thearyasamaj.org

अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भव, अभाव इन आठ प्रमाणों के अतिरिक्त सृष्टि क्रम तथा आत्मानुभूति इत्यादि को भी सत्यासत्य के निर्णय में प्रमाणभूत स्वीकार किया है। आधुनिक वैज्ञानिक भी सत्य की खोज में रिसर्च सेन्टरों एवं प्रयोगशालाओं में निरन्तर कार्यरत हैं। संस्कृत साहित्य में सत्य की महिमा का जितना सुन्दर व विशद वर्णन उपलब्ध है वह अन्यत्र दुर्लभ है। महाभारत में वेद व्यास का कथन है- **''सत्यस्य वचनं श्रेयः।''** अर्थात् सत्य कल्याणकारक है। भारतीय संस्कृति में इसी सत्य को **''सत्यं स्वर्गस्य सोपानम्''** तथा परम ज्ञान व तप बतलाया है। सत्य ही मन, वाणी की शुद्धि तथा आत्मा को पवित्र करने वाला है।

इस प्रकार यथार्थ चिन्तन से यह स्पष्ट है कि संसार में सबसे अधिक अनर्थ, कष्ट, विनाश, हानि, क्लेश सत्य को न जानने व न मानने से हो रहे हैं। सत्य के पक्ष को न ग्रहण करने से संसार में अनेक विनाशक युद्ध हुए हैं यथा- राम-रावण का युद्ध, महाभारत का युद्ध, द्वितीय विश्व युद्ध, खाड़ी युद्ध तथा पाकिस्तान के साथ कारगिल युद्ध।

अतः यदि हम संसार के प्राणियों की रक्षा तथा पर्यावरण की सुरक्षा करना चाहते हैं तो केवल सिद्धान्त रूप में नहीं अपितु व्यवहार में सत्य को अपनाना होगा। ऋत एवं सत्य का मार्ग ही कल्याण, स्वस्ति, सुख-शान्ति का मार्ग है। वेद के अनुसार- **'सत्येनोत्तभिता भूमिः'** (अथर्ववेद १४/१/१) यह विश्व अगर टिका हुआ है तो सत्य के आधार पर ही। इसी वैदिक संस्कृति से प्रेरणा प्राप्त कर आर्यावर्त्त के राष्ट्रनायकों ने उपनिषद् वाक्य **''सत्यमेव जयते''** को राष्ट्रीय चिह्न में जीवन का पाथेय बनाने के लिए प्रतिष्ठापित किया है। यही मानव मात्र का चरम लक्ष्य होगा तो संसार में **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** की भावना पैदा होगी तथा चहुँमुखी विकास व सफलता होगी। यही विज्ञान एवं धर्म का भी निष्कर्ष है।

- आर्यसमाज शक्तिनगर, सोनभद्र (उ.प्र.)

पुस्तक - समीक्षा

(१) पुस्तक का नाम- यजुर्वेद-प्रकाश (यजुर्वेद संहिता का पद्यानुवाद) १-१० अध्याय

लेखक- कविरत्न पं. जागेश्वर प्रसाद निर्मल

प्रकाशक- मानवता प्रकाशन, राजयोग, जनता कॉलोनी, पहाड़गंज, अजमेर

मूल्य- २००/-, **पृष्ठ-** १९२

कवि की देन अनूठी होती है। कवि अपने वाक् जाल से पाठकों के हृदय में नई तरंगे उत्पन्न कर देता है। कवि की उड़ान हृदयस्पर्शी होती है, जीवन के कायाकल्प में महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। यह कथन नितान्त सत्य है कि जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ पहुँचे कवि। ऐसी काव्य रूप प्रदान करने का कार्य जागेश्वर जी निर्मल ने किया है। वेद माता-यजुर्वेद संहिता के भाग १ से १० का अर्थात् चार सौ तीस मन्त्रों पर पद्यानुवाद कर भगीरथ गोते लगाने का कार्य पाठकों का है वे किन-किन रत्नों को प्राप्त कर पायेंगे यह उनकी क्षमता है।

वसोः पवित्रमसि शतधारं वसो पवित्रमसि सहस्त्रधारम्।
देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा काधुक्षः।।३।।

१.३ चमकेगा जीवन दिनमान

परोपकार के पथ है शत शत हो सकते हैं नाम हजारों
बने यज्ञमये जीवन जिससे, हो पवित्रता का संसार।।
सांय प्रातः प्रभु अर्चन से, हो सकते हो शुद्ध महान्।
वेद धेनुवे दुहा कीजिए, चमकेगा जीवन दिनमान।।

वेद का पढ़ना पढ़ाना, सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। पाठकों से अपेक्षा है वे स्वयं रसास्वादन करें तथा अन्यों को करायें यही कवि की सफलता है।

---

(२) पुस्तक का नाम- अध्यात्म काव्यधारा

लेखक- बाबूलाल जोशी

प्रकाशक- डॉ. विनोद अहलूवालिया, डॉ. दक्षदेव गौड़, आर्यसमाज मल्हारगंज, इन्दौर

मूल्य- २०/-, **पृष्ठ-** ६४

कवि अपनी लेखनी स्वतन्त्र रूप से चलाता है। वह किन संकेतों की ओर अग्रसर कर रहा है। कवि के हाव-भाव ही पाठकों के मन को उद्वेलित करता है। अध्यात्म का क्षेत्र भिन्न है। वेद, उपनिषद्, ब्राह्मण ग्रन्थों का परिचय काव्य रूप में दिया है संस्कृतनिष्ठ शब्दों को आर्यभाषा में काव्य रूप में प्रस्तुत किया है। यह जन साधारण के लिए उपयुक्त होगा। अतः पाठक संस्कृत को आर्य भाषा काव्य रूप में समझने का प्रयास करें। लेखक का साधुवाद।

वैदिक वृष्टि यज्ञ की समीक्षा पूर्व में की जा चुकी है। उसी पुस्तिका में भाग २ कर के जोड़ा गया है। प्रार्थना व अतिवृष्टि को जोड़ा गया है।

- देवमुनि, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

www.thearyasamaj.org

विधर्मियों के प्रश्न व स्वामी दर्शनानन्द जी के उत्तर

प्रस्तुत २० प्रश्न कुँवर दिग्विजय सिंह, वीधूपुरा, इटावा ने जैनतत्त्वप्रकाशिनी सभा, इटावा के माध्यम से भूमण्डल के समस्त आर्यसमाजी विद्वानों से ११ जुलाई १९१२ में किए थे। अत: श्री स्वामी दर्शनानन्द जी ने इन प्रश्नों का युक्ति-युक्त उत्तर देकर पुनः सरावगियों से २० प्रश्न किए। 'वैदिक यन्त्रालय' से जुलाई १९१२ में ही एक ट्रेक्ट के रूप में प्रकाशित ये प्रश्न व उत्तर, परोपकारी के सुधी पाठकों के समक्ष उपस्थित हैं।

-सम्पादक

१. प्रश्न- द्रव्य का लक्षण क्या है और उसके कितने भेद हैं तथा उनके विशेष लक्षण क्या हैं?

उत्तर -

क्रियागुणवत्समवायिकारणमिति द्रव्यलक्षणम्।।

वै.अ. १/आ.१/सू. १५

"क्रियाश्च गुणाश्च विद्यन्ते यस्मिंस्तत् क्रिया गुणवत्"

जिसमें क्रिया, गुण और केवल गुण रहें, उसको द्रव्य कहते हैं। उनमें से पृथिवी, जल, तेज, वायु, मन और आत्मा ये छ: द्रव्य क्रिया और गुण वाले हैं तथा आकाश, काल और दिशा ये तीन क्रियारहित गुण वाले हैं, **(समवायि)**

"समवेतुं शीलं यस्य तत् समवायि, प्राग्वृत्तित्वं कारणं समवायि च तत्कारणं च समवायिकारणम्"

"लक्ष्यते येन तल्लक्षणम्"

जो मिलने के स्वभावयुक्त कार्य्य से कारण पूर्वकालस्थ हो, उसी को द्रव्य कहते हैं; जिससे लक्ष्य जाना जाय, जैसा रूप से तेज जाना जाता है, उसको लक्षण कहते हैं।

पृथिव्यापस्तेजो वायुराकाशं कालो दिगात्मा मन इति द्रव्याणि।।

वै.अ.१/आ.१/सू.५

पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिशा, आत्मा और मन ये नव द्रव्य हैं।

२. प्रश्न- आर्य्य सिद्धान्त के अनुसार मूल पदार्थ कितने और कौन-कौन से हैं तथा उनके लक्षण क्या हैं? वे मूल पदार्थ ऐसे होने चाहियें जिनमें कि गुण, कर्म, सामान्य, विशेषादि समस्त पदार्थ गर्भित हो जायें, परन्तु वे किसी में भी गर्भित न होवें।

उत्तर- ब्रह्म, जीव और प्रकृति। ब्रह्म का लक्षण यह है- ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है।

सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः प्रकृतेर्महान् महतोऽहङ्कारोऽहङ्कारात् पञ्चतन्मात्राण्युभयमिन्द्रियं तन्मात्रेभ्यः स्थूलभूतानि पुरुष इति पञ्चविंशतिर्गणः।।

६१ सांख्य।

अर्थ- सत्वगुण प्रकाश करने वाला, रजो गुण न प्रकाश और न आवरण करने वाला, तमोगुण आवरण करने वाला, जब यह तीनों गुण समान रहते हैं, उस दशा का नाम प्रकृति है। क्योंकि वर्तमान दशा में सत्वगुण, तमोगुण का परस्पर विरोध है। इस समय जिस शरीर में सत्वगुण रहता है, वहाँ तमोगुण का वास नहीं और इसी तरह जहाँ तमोगुण का निवास है वहाँ सत्वगुण नहीं, परन्तु कारण अर्थात् सूक्ष्म की दशा में एक दूसरे के विरुद्ध नहीं कर सकते उस समय पास ही रह सकते हैं अब उस प्रकृति से महतत्त्व अर्थात् बुद्धि उत्पन्न होती है और बुद्धि से अहङ्कार और अहङ्कार से मन, पञ्च तन्मात्राएँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ उत्पन्न होती हैं और पञ्चतन्मात्राओं से पाँच भूत अर्थात् पृथिवी, अप्, तेज, वायु और आकाश होते हैं और जब इनसे पुरुष अर्थात् जीव और ब्रह्म मिल जाता है तो २५ गण कहलाते हैं।

इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिङ्गमिति।।

न्याय./अ.१/सूत्र.१०

जिसमें (इच्छा) राग, (द्वेष) वैर, (प्रयत्न) पुरुषार्थ, सुख, दु:ख, (ज्ञान) जानना गुण हों वह जीवात्मा कहाता है।

इच्छा, द्वेष, सुख, दु:ख यह तटस्थ लक्षण अर्थात् औपाधिक गुण हैं। ज्ञान और प्रयत्न स्वाभाविक हैं।

३. प्रश्न- पदार्थ की सिद्धि के वास्ते आप प्रमाण को मानते हैं या नहीं? यदि मानते हैं तो उनके लक्षण और भेद तथा भेदों के लक्षण क्या-क्या हैं?

उत्तर- कोई पदार्थ बिना प्रमाण के सिद्ध नहीं होता और प्रमाण यह हैं- प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द, जिनके लक्षण और विभाग न्यायदर्शन अध्यााय १, आन्हिक १ या सत्यार्थप्रकाश समुल्लास तीन पढ़ लीजिये यहाँ स्थान बढ़ जाने से नहीं लिखे।

४. प्रश्न- बिना व्याप्ति के अनुमान की सिद्धि नहीं होती अत: बतलाइये कि व्याप्ति का ग्रहण किस प्रमाण से होता है तो अन्योन्याश्रय दोष आता है और यदि प्रत्यक्ष से मानो तो प्रत्यक्ष इन्द्रियजन्य होता है और इन्द्रियाँ परिमित

www.thearyasamaj.org

देश काल के विषय को ग्रहण करती हैं तथा व्याप्ति सर्वदेशकालोपसंहारवती होती है, अत: प्रत्यक्ष और अनुमान से व्याप्ति का ग्रहण नहीं हो सकता।

उत्तर- व्याप्ति का ग्रहण प्रत्यक्ष प्रमाण से होता है और अनुमान व्याप्ति के आधीन है व्याप्ति अनुमान के आधीन नहीं। जीव के जाति से विभु होने के कारण हर कार्य में अनुमान हो सकता है और मन दूर देश का जानने वाला होने से हर एक पदार्थ का जिसका कि मानसिक प्रत्यक्ष हो सकता है जानता है अर्थात् जानने का साधन है उससे व्याप्ति होती है।

५. प्रश्न- कारण के बिना कार्य्य कदापि नहीं होता, अत: यदि सृष्टि की आदि है तो बतलाइये पहिले मुर्गी थी या अण्डा?, यदि मुर्गी थी तो बिना अण्डे के कैसे हुई? यदि अण्डा था तो बिना मुर्गी के कैसे हुआ?

उत्तर- सृष्टि की आदि में कर्म्मयोनि पैदा होती है उस कर्मयोनि में मुर्गी पैदा होती है जैसे हर एक सांचा बिना सांचे के बना करता है और फिर सांचे से सांचा बनता है यह दोनों नियम हर एक विचारशील कार्य्यजगत् में देखता है। इसी कारण महर्षि कपिलदेव जी ने तीन प्रकार की योनि मानी हैं- कर्म्मयोनि, भोगयोनि और उभययोनि, जहाँ सांचे से सांचा बनता है वहाँ भी कारणकार्य्यभाव होता है और जहाँ बिना सांचे के सांचा बनता है वहाँ भी कर्त्ता की क्रिया और उपादान कारण के सद्भाव से कारण का भाव होता है। इस कारण जगत् की विद्या की अनभिज्ञता का हेतु होने से यह प्रश्न ठीक नहीं।

६. प्रश्न- **मनुष्यों की उत्पत्ति माता-पिता के रजवीर्य के बिना नहीं हो सकती तो सृष्टि की आदि में वह बिना माता-पिता के कैसे हुई?**

उत्तर- मनुष्यों की उत्पत्ति योनिज और अयोनिज दोनों तरह से होती है। जिन जीवों के कर्म्म अभी बाकी हैं उनका माता-पिता के साथ कर्म्मों का सम्बन्ध होने से उनकी उत्पत्ति माता-पिता के रजवीर्य्य से होती है और जो जीव मुक्ति से लौटते हैं जिनके कर्म्म शेष नहीं होते उनकी उत्पत्ति का नियम कर्म्मयोनि में बिना माता-पिता आने का है, जैसा वैशेपिकदर्शन के अध्याय ४ आह्निक २ के सूत्र १० में "**संन्त्ययोनिजा:**" के भाष्य में प्रशस्तपाद ऋषि ने दिखलाया है और उदाहरण के तौर पर वही सांचा बिना सांचे के बनना और सांचे से बनना देख लीजिये।

७. प्रश्न- सृष्टिकर्त्ता ईश्वर के सद्भाव में प्रमाण क्या है?, यदि कहो कि सूर्य्य चन्द्रादि ईश्वरकृत हैं क्योंकि ये कार्य्य हैं घटादि की तरह तो यह कार्य्यत्व हेतु असिद्ध है, क्योंकि सूर्य्यादि का प्रागभाव किसी भी प्रमाण से सिद्ध नहीं होता। घासादि बिना कर्त्ता के भी पैदा होती दीखती है इसलिये यह हेतु व्यभिचारी भी है।

उत्तर- ईश्वर के सृष्टिकर्त्ता होने में अनुमान प्रमाण है। यह प्रत्यक्ष देखा जाता है कि कोई विकारशील और सावयव वस्तु जन्यत्व से शून्य नहीं हो सकती। ऐसा एक उदाहरण दीजिये जहाँ विकारशील भी हो और नित्य भी हो। सूर्य चन्द्रादि सब सावयव और विकारी हैं, इसलिये उनका कार्य होना सिद्ध है। कोई वस्तु जो पैदा न हुई हो और बढ़ती हो और परिणाम वाली हो, दिखलाइये। परिणाम तीसरा विकार है जगत् परिणमनशील है यह आप मानते हैं और मनुष्य वृक्षादि पदार्थों को कार्य होते हुए परिणमनशील देखते हैं इससे सिद्ध है कि जिस वस्तु में परिणाम है और सावयवत्व है वह जन्य है, जो जन्य है उसका जनक अवश्य है। इसलिये जगत् का विकारशील और सावयवत्व होना ईश्वर के जगत्कर्त्ता होने का हेतु है। कोई विकारी वस्तु ऐसी दिखाइये जो जन्य होने से शून्य हो, जिससे व्यभिचार पाया जावे।

८. प्रश्न- ईश्वर में सृष्टिकर्त्तृत्व धर्म स्वाभाविक है या वैभाविक? यदि स्वाभाविक है तो शुद्ध द्रव्य का स्वाभाविक धर्म नित्य होता है, इसलिये जिस समय ईश्वर ने सृष्टि रची उससे पहिले भी उसमें सृष्टिकर्तृत्व धर्म का प्रसङ्ग आया और ऐसा होने से सृष्टि की अनादिता सिद्ध हुई। यदि वैभाविक धर्म मानो तो कौनसे भिन्न द्रव्य का ईश्वर से बन्ध है, जिसके निमित्त से उसके वैभाविक परिणाम हुए?

उत्तर- ईश्वर स्वाभाविक क्रिया रखता है, जिससे संयोग, वियोग दोनों पाकज गुण उत्पन्न होते हैं, संयोग से सृष्टि और वियोग से प्रलय। ईश्वर हमेशा सृष्टि रचता है और प्रलय करता है, इसी से सृष्टि प्रवाह से अनादि कहलाती है। यह सृष्टि और प्रलय का प्रवाह जीवों के कर्मों के व्यवधान से दो रूप से प्रतीत होता है जो ईश्वर की स्वाभाविक क्रिया का फल है। कोई परिणाम उसके न्याय से विरुद्ध नहीं हुआ जिससे विभाव कहला सके।

शेष भाग अगले अंक में.....

शमदमादि गुणों का आधार योगाभ्यास में तत्पर योगी-जन अपनी योगविद्या के प्रचार से योगविद्या चाहने वालों का आत्मबल बढ़ाता हुआ सब जगह सूर्य्य के समान प्रकाशित होता है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.१३

योगविद्या में सम्पन्न शुद्धचित्त युक्त योगियों को योग्य है कि जिज्ञासुओं के लिये नित्य योग और विद्यादान देकर उन्हें शारीरिक और आत्मबल से युक्त किया करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.१४

www.thearyasamaj.org

शतहस्त समाहर सहस्रहस्त सं किर

(अथर्ववेद ३.२४.५)

(सौ हाथों से कमाओ, हजार हाथों से दान करो।)

ओडिशा पीड़ितों की सहायता के लिए अपने हाथ बढ़ाइये

आप सबको विदित है कि देश के अनेक भागों में बाढ़ का प्रकोप चल रहा है, जैसा कि उत्तराखण्ड में बाढ़ का भीषण प्रकोप हुआ था। १२/१०/२०१३ एवं १३/१०/२०१३ को ओडिशा आन्ध्र प्रदेश के समुद्र तटीय पर तूफान आया। ओडिशा के गोपालपुर क्षेत्र गन्जाम जिले में बहुत जन हानि हुई। घरबार उजड़ गये। खेत नष्ट हो गये। मकान धराशायी हो गये। ग्रामीण जन बेघर हो गये। ऐसे में उनको आर्थिक सहयोग की आवश्यकता है। अत: श्रद्धानुसार सहयोग की अपेक्षा है। यातायात व संचार व्यवस्था टूट गई। जिन लोगों के घर बह गये हैं, जिनके परिजन बिछड़ गये हैं, जो आज जीवन-यापन के साधनों का अभाव झेल रहे हैं, उन्हें आवास, भोजन, चिकित्सा के साधनों की अत्यन्त आवश्यकता है।

गरीब असहाय लोगों तक पहुँच कर उनकी सहायता, सहयोग करना, सभी देशवासियों का कर्त्तव्य है। इस कार्य के लिए परोपकारिणी सभा का सेवादल ओडिशा में पहुँच गया और युवा लोग सेवा कार्य में जुट गये हैं।

हम सब मिलकर इस कार्य को आगे बढ़ायें। अत: हमारा सबका कर्त्तव्य है तन-मन-धन से इस कार्य में सभा की सहायता करें। आप जितनी शीघ्रता से अपना सहयोग प्रदान करेंगे हम उतनी शीघ्रता से उसे पीड़ितों तक पहुँचा सकेंगे।

आप अपना धन-बाढ़ पीड़ित सहायता कोष में भेजें। धन भेजने का पता निम्न प्रकार है-

१. बैंक खाता संख्या - 091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

जो कार्यालय में आकर देना चाहे वे कार्यालय समय में १०.३० से ५.३० बजे तक कार्यालय परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर, राज. पर देवें। अन्य समय में ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर सम्पर्क कर अपना सहयोग जमा करा सकते हैं।

जो बैंक में राशि जमा कराना चाहें वे उपरोक्त पते पर जमा करा सकते हैं।

दिल्ली व आसपास के लोग अपनी सहायता निम्न पते पर दे सकते हैं-

श्री सत्यानन्द आर्य,
रोड़ सं. ४६-ए, आर्यसमाज मन्दिर,
पंजाबी बाग पश्चिम, दिल्ली।

एवं सहयोग जमा कराकर रसीद प्राप्त कर सकते हैं।

आपके सहयोग की प्रतीक्षा में **परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

सम्पर्क : दूरभाष-०१४५-२४६०१६४, ईमेल-psabhaa@gmail.com

www.thearyasamaj.org

जिज्ञासा समाधान - ५३

-आचार्य सोमदेव

जिज्ञासा- आज अभिवादन वाचक शब्द बहुत चल रहे हैं उनमें नमस्ते और नमस्कार भी है। अभिवादन करते समय कौन-सा शब्द या वाक्य बोलें कृपया बतावें। नमस्कार और नमस्ते में से अभिवादन के लिए कौन-सा ठीक है, इनका अर्थ क्या है बताने की कृपा करें।

अमोल आर्य, गाँव. आसोला, जि. वाशिम, महाराष्ट्र

समाधान- हम समाज में रहने वाले हैं, समाज में रहते हुए परस्पर एक-दूसरे से व्यवहार करना पड़ता है, करना होता है। हमारा व्यवहार शिष्टाचार पूर्वक हो इसके लिए हम परस्पर एक-दूसरे से मिलते समय दूसरे के सम्मान के लिए अभिवादन करते हैं। अभिवादन करते समय हम वाणी से बोलते हैं। अभिवादन करते हुए वाणी से क्या बोलें और शरीर से किस प्रकार की क्रिया (संकेत) करें यह विचारणीय है। आज वर्तमान में अभिवादन सूचक शब्द बहुत सारे बोले जाते हैं, जैसे- राम-राम, जय राम जी की, राधे-राधे, जय श्री कृष्ण, जय माता दी, जय भीम, सत् श्री अकाल, अस्सला मालेकुम, गुड़ मोरनिंग, ओम् जी, नमस्कार, नमस्ते और अपने-अपने मत वाले अपने गुरु आदि का नाम लेते हैं। इन सब में अभिवादन के लिए कौन-सा ठीक-ठीक सार्वभौमिक सब के लिए हो यह विचार कर देखें तो पता चलता है कि "नमस्ते" ही एक मात्र है जिसके बोलने से एक दूसरे का सम्मान होता है। नमस्ते के अतिरिक्त राम-राम, ओम् जी आदि शब्दों से एक दूसरे का सम्मान नहीं होता है। ये अभिवादन करते समय सम्मान सूचक शब्द नहीं हैं। ये किसी वर्ग विशेष के हो सकते हैं, जिनको की उन वर्ग विशेष वालों ने अपनी अज्ञान से अभिवादन के लिए इनको अपना लिया है।

राम-राम आदि को तो मान लेवें कि अभिवादन सूचक शब्द नहीं हैं, किसी वर्ग विशेष के हैं, किन्तु नमस्कार तो ऐसा नहीं है, इसको स्वीकार क्यों नहीं करते? इसका उत्तर है कि जो भाव और अर्थ नमस्ते में है वह नमस्कार में भी नहीं हैं। 'नमस्कार' एक पद है, संज्ञा है और 'नमस्ते' एक वाक्य है। नमस्कार में दो शब्द नमः और कार हैं, ये दोनों मिलकर एक पद बना, जिसका अर्थ है- नमन करना, झुकना, अभिवादन करना आदि। जब किसी को नमस्कार जी कहते हैं तो अर्थ निकलता है- नमन करना जी, झुकना जी आदि। नमस्कार कहने से झुकना, नमन करना, सामने वाले को है या स्वयं को है यह पता ही नहीं चलता। किन्तु नमस्ते में ऐसा नहीं है उसमें तो ठीक-ठीक पता चलता है कि मैं सामने वाले को नमन कर रहा हूँ। नमस्ते में नमः+ते, नमः=नमन, ते=तुम्हारे (आपके) लिए अर्थात् मेरा तुम्हारे (आपके) लिए नमन होवे=मैं आपका मान्य=सम्मान करता हूँ, आदर करता हूँ आदि भाव नमस्ते में ही हैं अन्य अभिवादन सूचक शब्दों में नहीं।

आगे नमस्ते के विषय में 'सत्यार्थ भास्कर' से उद्धृत करते हैं- परस्पर अभिवादन के लिए नमस्ते करना ही शास्त्र सम्मत है। वेद, ब्राह्मण, उपनिषद्, रामायण, महाभारत तथा पुराणादि ग्रन्थों में सर्वत्र इसी का विधान किया है। अन्य जितने भी पद वर्तमान में प्रचलित हैं वे सब अशास्त्रीय एवं कपोलकल्पित हैं। हमारे पूर्व पुरुष सदा से 'नमस्ते' का ही प्रयोग करते आये हैं। अपने कथन की पुष्टि में यहाँ कतिपय प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

यजुर्वेद के १६वें अध्याय के प्रथम मन्त्र में-

नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतो तऽइषवे नमः।
बाहुभ्यामुत ते नमः।। यजु. १६.१

नमस्ते वेदों में अनेकत्र हैं- ऋग्वेद- ८.७५.१०, अ. ६.१३.२, १२.४.४५, १३.४.४८, १.१३.१, यजु. १६.२१, अ. ११.२.२५, ११.२.३१, १०.१०.१, १.१३.२, ११.४.८, ६.१३.३, १.१०.२, यजु. १६.१, अ. ६.९०.३, यजु. १७.११, ३६.२० आदि। यजुर्वेद के १६वें अध्याय के ३०, ३२ मन्त्रों के अन्वयार्थ से स्पष्ट है कि यहाँ छोटे, बड़े, बराबर वाले सबके लिए नमस्ते से अभिवादन का निर्देश किया है। कठोपनिषद् में गुरुवर यमाचार्य नचिकेता को कहते हैं- "नमस्ते ब्रह्मन्। स्वस्ति मेऽस्तु" १.९। ब्रह्मवादिनी गार्गी महर्षि याज्ञवल्क्य का अभिवादन करती है- "सा होवाच, नमस्ते याज्ञवल्क्याय।" शत. १४.६.८.५। राजर्षि विश्वामित्र ने ब्रह्मर्षि वशिष्ठ से उनके आश्रम से विदा होते कहा- "नमस्तेऽस्तु गमिष्यामि मैत्रेणेक्षस्व चक्षुषा।" वा.रा.बा. ५२.१७। शकुनि मामा अपने भाणजे युधिष्ठिर से- 'ज्येष्ठो राजन् वरिष्ठोऽसि नमस्ते भरतर्षभ।' श्रीकृष्ण धृतराष्ट्र से- "नमस्ते पुण्डरीकाक्ष पुनः पुनरदम्।" कौशल्या अपने पुत्र राम से- "देव देव नमस्तेऽस्तु।" हिमवान् जी अपनी पुत्री पार्वती से- "नमस्तेऽस्तु महादेवी नमस्ते परमेश्वरी।" कूर्म पु. १२.२३६। **नमस्ते के उत्तर में नमस्ते**- राम उवाच- "नमस्ते देव देवेश भक्तानामभयंकर।" उत्तर में महादेव- "श्वेतं द्विपं स्वकं स्थानं व्रज देव नमोऽस्तुते (नमः+ते=नमस्तेऽस्तु)।" पद्मम पु.। सावित्री- "देव!

www.thearyasamaj.org

नमोऽस्तु ते।'' ब्रह्मा जी ''पादयोः पतितस्तेऽहं.... नमोऽस्तु ते''श्वसुर दक्ष अपने जामाता महादेव जी से- ''नमो दिक्चर्मवस्त्राय नमस्ते तीव्रतेजसे।'' प.पु.सृ.खं. ५/८०

ब्रह्मा जी की भूल से उनकी पत्नी रुष्ट हो गई। रुष्ट सावित्री को मनाने के लिए उन्होंने विष्णु और लक्ष्मी को भेजा। ब्रह्मा जी की आज्ञा से वे दोनों सावित्री को मनाने गये। सावित्री ने जब उन दोनों को आते देखा तो जल्दी से खड़ी हो गई- 'उत्तस्थौ सत्वरा भूत्वा।' तब विष्णु जी बोले- ''नमस्ते देव देवेशि ब्रह्म पत्नि नमोऽस्तु ते।''

विष्णु जी आयु में सावित्री से बड़े और रिश्ते में श्वसुर थे और प्रभावशाली थे। इसलिए सावित्री को मना लाने का काम ब्रह्मा जी ने उन्हें और लक्ष्मी को सौंपा था। परन्तु वहाँ जाकर वे बातों में लग गये। देरी होती देख ब्रह्मा जी ने पार्वती और शंकर जी को भेजा। शंकर ने वहाँ जाते ही सावित्री को नमस्ते की- ''दूरादेव तु रुद्रेण ब्रह्माणि चाभिवादिता, देवि नमोऽस्तु ते।'' फिर शंकर जी ने पार्वती की ओर संकेत करते हुए कहा- ''एषा गौरी समायाता भ्रातृभार्या तवानघा।'' तुम्हारी भाभी भी मेरे साथ तुम्हें मनाकर ले जाने को आयी हैं। - प.पु.

सावित्री और गायत्री दोनों ब्रह्मा जी की पत्नियाँ थीं। सावित्री को शंकर जी बहन कहते हैं तो गायत्री (बहन की सपत्नी होने के नाते) भी उनकी बहन हुई। पहले भाई ने बहन को नमस्ते की थी तो अब दोनों बहनें (गायत्री व सावित्री) भाई शंकर जी का अभिवादन करते हुए कहती हैं- ''नमस्ते गिरिजानाथ।'' हे पार्वतीपते! नमस्ते। -स्कन्द पु.ब्र.खं.से.मा. ४०.३१।

यह सारी कथा काल्पनिक है। यहाँ इसे उद्धृत करने का अभिप्राय इतना ही बताना है कि पुराणों तक में छोटे-बड़े, पति-पत्नी, श्वसुर-जामाता, भाई-बहन, गुरु-शिष्य, माता-पुत्र सभी अभिवादन के लिए नमस्ते का ही प्रयोग करते हैं।

गरुड़ पुराण में ५६ बार, देवी भागवत में ६६ बार, ब्रह्माण्ड में ९५ बार, कूर्म में ९९ बार, शिवपुराण में १४९ बार, भविष्य में २३० बार, पद्म में ३३५ बार और स्कन्द में (पाँचवें खण्ड तक) ५५३ बार- इस प्रकार पुराणों में ही कुल मिलाकर कम से कम १७४६ बार 'नमस्ते' का प्रयोग हुआ है। (यहाँ पुराणों का समर्थन लेश भी नहीं है, पुराण तो कपोल कल्पित और अनार्ष हैं ही। इनका देने का अभिप्राय है कि इन पुराणों को मानने वाला जो संघ है वह भी नमस्कार के पीछे पड़ा है, वेदादि में वर्णित नमस्ते इन्होंने नहीं अपनाया।)

गृहस्थों का कर्त्तव्य कर्म का निर्देश करते हुए महर्षि दयानन्द संस्कार विधि में लिखते हैं- ''सदा विद्यावृद्धों और वयोवृद्धों को 'नमस्ते' अर्थात् उनका मान्य किया करें।''

व्यवहारभानु में भी लिखा है- ''जब कोई सभ्य मनुष्य विद्वानों की सभा में वा किसी के पास जाकर नम्रतापूर्वक नमस्ते आदि करके.....।'' यहाँ महर्षि ने भी सर्वत्र नमस्ते को ही कहा, माना है।

नमस्ते करने का प्रकार- दोनों हाथ जोड़कर, हाथों को हृदय से (छाती के बीच) स्पर्श करते हुए, किञ्चित् नतमस्तक होकर ही 'नमस्ते' शब्द का उच्चारण करना चाहिए। मस्तिष्क ज्ञान का, हाथ शक्ति का और हृदय श्रद्धा व प्रेम का केन्द्र है। सो हृदय को स्पर्श करते हुए, हाथ जोड़ किञ्चित् नतमस्तक हो नमस्ते करने का अभिप्राय है- ज्ञानपूर्वक, श्रद्धा और प्रेम सहित, अपने सामर्थ्य से किसी का यथोचित अभिवादन करना। अभिवादन के रूप में छोटे अपने बड़ों के प्रति श्रद्धा और आस्था व्यक्त करते हैं, बड़े छोटों के प्रति अपना स्नेह व आशीर्वाद प्रकट करते हैं और बराबर वाले एक-दूसरे के प्रति मैत्री भाव से एक-दूसरे से सहयोग की कामना करते हैं। इसी प्रकार पुत्र माता-पिता के सामने और शिष्य गुरु के सामने आदर-सत्कार की भावना से नमन करता है तो माता-पिता और गुरुजन स्नेह करने व आशीर्वाद देने के लिए झुकते हैं।

इसलिए अभिवादन करते समय 'नमस्ते' का बोलना ही उपयुक्त है। इसी को बोलें और अन्यों को सिखावें, बतावें, आर्ष परम्परा का वहन करें। नमस्ते के विषय में इतना ही।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

योगविद्या के बिना कोई भी मनुष्य पूर्ण विद्यावान् नहीं हो सकता और न पूर्णविद्या के बिना अपने स्वरूप और परमात्मा का ज्ञान कभी होता है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२८

अकेला पुरुष यथोक्त राजशासन कर्म नहीं कर सकता इस कारण और श्रेष्ठ पुरुषों का सत्कार करके राज कार्य्यों में युक्त करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.३१

सब विद्वान् और विदुषी स्त्रियों की योग्यता है कि समस्त बालक और कन्याओं के लिये निरन्तर विद्यादान करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.३३

www.thearyasamaj.org

संस्था-समाचार

-१६ से ३० नवम्बर २०१३

१. ध्यान-प्रशिक्षक-प्रशिक्षण-शिविर सम्पन्न- परोपकारिणी सभा वैदिक ज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिए कृत-संकल्प है। अत: जब आज समाज में लोग ध्यान आदि क्रियाओं के प्रति जागरूक हो रहे हैं तथा विभिन्न सम्प्रदाय अपनी-अपनी ध्यान पद्धतियों के माध्यम से उन्हें अपनी ओर आकर्षित कर रहे हैं, ऐसे में वेद, आर्ष-ग्रन्थों तथा महर्षि दयानन्द के अनुसार 'वैदिक ध्यान पद्धति' का प्रचार-प्रसार करना सभा के लिए अनिवार्य हो जाता है। उपरोक्त उद्देश्य को लेकर सभा के तत्त्वावधान में तीन गोष्ठियाँ आयोजित की जा चुकी है, जिसमें आर्यजगत् के शीर्षस्थ योग प्रचारकों-साधकों ने ध्यान पद्धति के लिए गम्भीर सम्वाद किया। इन गोष्ठियों में वैदिक ध्यान का १५ मिनट का तथा ३० मिनट का एक प्रारूप तैयार किया गया। इस प्रारूप को सभा जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए प्रयासरत है। अत: अपने प्रयास के अन्तर्गत सभा ऋषि उद्यान परिसर में 'ध्यान-प्रशिक्षक-प्रशिक्षण-शिविर' के माध्यम से ऐसे प्रशिक्षक तैयार कर रही है जो अपने-अपने क्षेत्रों में जाकर वैदिक ध्यान का प्रचार-प्रसार कर सकें।

इस क्रम का दूसरा शिविर २४ नवम्बर से १ दिसम्बर तक आयोजित किया गया। (पिछला शिविर अप्रैल २०१३ में सफलता पूर्वक सम्पन्न हो चुका है।) इस 'ध्यान-प्रशिक्षक-प्रशिक्षण-शिविर' में चुने हुए ४९ व्यक्तियों को ही प्रवेश दिया गया, जो देश के विभिन्न प्रान्तों से पधारे थे। शिविर में शिविरार्थियों को स्वामी अमृतानन्द जी (इटारसी), स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी (देहरादून), डॉ. धर्मवीर जी, डॉ. केसरसिंह जी उदावत (पूर्व विभागाध्यक्ष, जवाहर लाल नेहरू चिकित्सालय, अजमेर), आचार्य सत्यजित् जी, स्वामी विष्वङ् जी, स्वामी सत्यानन्द जी, आचार्य सत्येन्द्र जी, स्वामी वेदपति जी, आचार्य कर्मवीर जी, आचार्य सानन्द जी, श्री श्यामसिंह जी सहयोगी (सहारनपुर), श्री राकेश आर्य (मुंजफ्फरनगर), डॉ. रमेश मुनि जी, माता ऊषा बंसल जी आदि विद्वान् महानुभावों का विभिन्न कक्षाओं तथा प्रायोगिक ध्यान प्रशिक्षण आदि में मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

शिविर में सभी शिविरार्थियों को ध्यान की १५ मिनट की प्रायोगिक विधि सविस्तार समझायी गई व इससे सम्बन्धित तथा ध्यान के अन्य पक्षों से सम्बन्धित शंकाओं का भी यथासमय समुचित समाधान किया गया। पुन: प्रत्येक शिविरार्थी से १५ मिनट के ध्यान के प्रारूप का प्रयोगात्मक अभ्यास करवाया भी गया, जिसमें विद्वान्-प्रशिक्षक, परीक्षक के रूप में समुपस्थित थे तथा अन्य शिविरार्थी नवीन साधकों की भाँति। ध्यान की प्रत्येक प्रस्तुति के पश्चात् परीक्षक, भावी-ध्यान प्रशिक्षकों को उनकी त्रुटियों से अवगत कराते थे तथा इन्हीं प्रस्तुतियों के आधार पर उन्हें अंक भी प्रदान किए गए। पुन: अन्त में सभी शिविरार्थियों की लिखित परीक्षा भी ली गई। इन दोनों परीक्षाओं के सम्मिलित अंकों के आधार पर ही ८ शिविरार्थियों को उच्च प्रथम श्रेणी तथा २८ शिविरार्थियों को प्रथम श्रेणी प्रदान की गई, इस प्रकार कुल ३६ शिविरार्थियों ने ध्यान-प्रशिक्षक का प्रमाण-पत्र प्राप्त किया, शेष शिविरार्थियों को शिविर में भाग लेने का प्रमाण-पत्र प्रदान किया गया।

शिविर के अन्तर्गत उपरोक्त विद्वानों की कक्षाओं में शिविरार्थियों को समुचित बौद्धिक सामग्री प्राप्त हुई। स्वामी अमृतानन्द जी ने ध्यान, धारणा, प्रत्याहार, यम, नियम, विवेक, वैराग्य, अभ्यास आदि पर समुचित प्रकाश डाला। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के २२वें सूक्त के २०वें मन्त्र- '**तद्विष्णो: परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरय:। दिवीव चक्षुराततम्।।**' की व्याख्या करते हुए आपने बताया कि उस परमात्मा के आनन्दरूप मोक्ष पद को धार्मिक विद्वान् ही प्राप्त कर सकते हैं, ऐसे धार्मिक विद्वान् जो संसार को, अपने को, ईश्वर को वैसा ही देखते हैं, जैसे वे हैं। इस मन्त्र में एक उपमा के माध्यम से स्पष्ट किया गया कि जैसे प्रकाश की उपस्थिति में चक्षु वाला (ठीक नेत्रों वाला) वस्तुओं को देखता है ठीक उसी प्रकार विद्वान् भी संसार के समस्त पदार्थों को उनेक यथार्थ स्वरूप में देखता है। हमें भी इस परम पद को पाने के लिए ऐसा बनना होगा। वैराग्य पाना होगा, वैराग्य से पूर्व विवेक पाना होगा। विवेक पाने के लिए सर्वप्रथम वैज्ञानिकों की तरह एक-एक विषय को लेकर, उसमें मन्थन करके, निर्णय निकालकर, फिर उस निर्णय को जीवन में लाना होगा, उतारना होगा।

स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी ने सभी शिविरार्थियों का आह्वान करते हुए कहा कि हम अत्यन्त सौभाग्यशाली हैं कि हमें भारत में जन्म मिला, जहाँ हमें परमात्मा की वाणी, ऋषियों का ज्ञान सहजता से प्राप्त हो गया। लेकिन आज समय विकट है, ऋषियों की संस्कृति डूबती जा रही है, हमें संस्कृति की रक्षा के लिए काम करना होगा। वैदिक

www.thearyasamaj.org

ध्यान के माध्यम से अपने अन्दर आध्यात्मिकता का विकास कर अपना निर्माण करना होगा, पुन: समाज में संस्कृति को बचाने के लिए कार्य करना होगा।

डॉ. धर्मवीर जी ने अपने प्रवचन क्रम में ईश्वर के सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, निराकार, सर्वशक्तिमान् आदि स्वरूपों की स्पष्ट व्याख्या की। अपने प्रश्न उपस्थित करते हुए शिविरार्थियों को बताया कि 'सर्वज्ञता' ही ईश्वर को ईश्वर बनाने वाला गुण है। सर्वज्ञता के लिए सर्वव्यापक होना अनिवार्य है, क्योंकि कोई भी उन विषयों को नहीं जान सकता, जहाँ उसकी उपस्थिति न हो। हम घर में होते हुए, दुकान की या अन्य किसी स्थान की स्थिति नहीं जान सकते, जब तक कि हमारा उस स्थान से किसी भी प्रकार सम्पर्क न हो, अत: सर्वज्ञ के लिए एक समय में सभी स्थानों में होना अनिवार्य हो जाता है, और वह सर्वव्यापकता के बिना सम्भव नहीं। ईश्वर सिद्धि की चर्चा करते हुए आपने बताया कि उदयनाचार्य कृत 'न्याय-कुसुमाञ्जलि' में इस विषयक अनेक प्रमाण दिए गए हैं। इन प्रमाणों की आपने सरल व्याख्या भी प्रस्तुत की।

आचार्य सत्यजित् जी ने 'ध्यान-पद्धति' के १५ मिनट वाले प्रारूप के हर बिन्दु को शिविरार्थियों के मध्य सरल व्याख्या कर स्पष्ट किया, इसके साथ-साथ प्रतिदिन शंका-समाधान के माध्यम से शिविरार्थियों की ध्यान सम्बन्धी जिज्ञासाओं का समाधान भी किया।

स्वामी विष्वङ् जी ने भी ध्यान के अन्य पक्षों पर समुचित प्रकाश डाला, यथा- ध्यान-अप्रत्यक्ष वस्तु को प्रत्यक्ष करने की प्रक्रिया है, अप्रत्यक्ष वस्तु का ही ध्यान किया जाता है। आचार्य सत्येन्द्र जी ने ईश्वर के दयालु व न्यायकारी स्वरूप की व्याख्या प्रस्तुत की। आपने बताया कि आज समाज में पापों को क्षमा करना ही दयालुता माना जाता है जो कि वेदादि शास्त्रों के विरुद्ध है, महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थ में इन गुणों की अत्यन्त ग्राह्य व्याख्या की है। डॉ. केसरसिंह जी उदावत ने आधुनिक चिकित्सा शास्त्र की दृष्टि से ध्यान के द्वारा शरीर व मन पर पड़ने वाले प्रभावों को अनेक उदाहरणों के माध्यम से समझाया।

२. संस्कृत-सम्भाषण शिविर- परोपकारिणी सभा वैदिक संस्कृति के मूल तत्त्वों को संरक्षित करने के लिए कृत संकल्प है। चूँकि वैदिक संस्कृति व सभ्यता के भौतिक स्रोत वेद, उपनिषद्, दर्शन आदि आर्ष साहित्य संस्कृत भाषा में ही निबद्ध हैं, अत: ऐसी देवभाषा संस्कृत भाषा का संरक्षण, संवर्धन करना, सभा का लक्ष्य हो जाता है। वर्तमान समय में हम अपनी भाषा के महत्त्व से अनभिज्ञ होते जा रहे हैं, अत: आज 'संस्कृत-भाषा-अवबोधन' हमारे लिए एक कठिन लक्ष्य हो रहा है।

संस्कृत भाषा हमारी लोकभाषा बने, इस उद्देश्य से परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्तमान समय में संस्कृत भाषा का प्रशिक्षण देने का अभियान प्रारम्भ हो चुका है। इस अभियान के अन्तर्गत उपाध्याय श्री भैरुलाल जी, जो कि ऋषि उद्यान में ही निवास करते हैं, संस्कृत भाषा का व्यावहारिक सम्भाषण का प्रशिक्षण दे रहे हैं तथा समय-समय पर अजमेर तथा आसपास के क्षेत्रों की शिक्षण संस्थाओं में 'संस्कृत-सम्भाषण-शिविर' लगा रहे हैं।

आपने विगत २० से २९ नवम्बर को अजमेर स्थित सावित्री राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय में दस दिवसीय 'संस्कृत-सम्भाषण शिविर' लगाया। इस शिविर में कक्षा १० की लगभग १२० छात्राओं ने सोत्साह भाग लिया तथा संस्कृत की सरलता, सरसता, आत्मनिष्ठता तथा हमारी भारतीय संस्कृति का मूलाधार संस्कृत भाषा है, का ज्ञान प्राप्त किया।

३. डॉ. धर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रम- सम्पन्न कार्यक्रम (क) १५ से १७ नवम्बर २०१३- आर्यसमाज धामावालाँ, देहरादून के कार्यक्रम में उद्बोधन प्रदान किया, यहाँ आपके साथ डॉ. विनय विद्यालंकार जी तथा सोमदेव शतांशु भी समुपस्थित थे।

(ख) १८ से २४ नवम्बर २०१३- आर्यसमाज पटेल नगर, दिल्ली के कार्यक्रम में व्याख्यान दिया।

(ग) २४ से २७ नवम्बर २०१३- 'ध्यान-प्रशिक्षक-प्रशिक्षण-शिविर' ऋषि उद्यान में शिविरार्थियों को यज्ञोपरान्त उद्बोधन प्रदान किया।

आगामी कार्यक्रम- (क) १७ दिसम्बर २०१३- अमरावती (महाराष्ट्र) में पारिवारिक यज्ञ-प्रवचन के लिए पधारेंगे।

(ख) २१ से २९ दिसम्बर २०१३- आर्यसमाज विधानसरणी, कोलकाता (पश्चिम बंगाल) के कार्यक्रम में भाग लेंगे।

४. यज्ञ व प्रवचन- जैसा कि विदित है कि ऋषि उद्यान, आर्यजगत् के उन स्थानों में से एक है, जहाँ पूरे वर्ष दोनों समय अपरिहार्य रूप से यज्ञ एवं प्रवचन का कार्यक्रम होता है। प्रात:काल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का पाठ तथा पूर्व निर्धारित मन्त्र का महर्षि दयानन्द कृत भाष्य का स्वाध्याय किया जाता है।

यज्ञोपरान्त प्रवचनों के क्रम में समुपस्थित धर्मप्रेमी जनों को स्वामी विष्वङ् जी, डॉ. धर्मवीर जी, आचार्य सत्येन्द्र जी, आचार्य कर्मवीर जी आदि का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

www.thearyasamaj.org

महर्षि देव दयानन्द सरस्वती जी अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास के अन्दर ईश्वर के ओंकारादि नामों का वर्णन किया। प्राकृतिक पदार्थों के जो नाम रखें गये हैं वे सम्पूर्ण गुण ईश्वर में ही घटते हैं, अतः ये नाम ईश्वर के भी हैं। जैसे (पृथु विस्तारे) इस धातु से पृथिवी शब्द बनता है। **'यः पर्थति सर्वं जगद्विस्तृणाति तस्मात् स पृथिवी'** जो सब विस्तृत जगत् का विस्तार करने वाला है, इसलिए परमात्मा का नाम पृथिवी है। जिस प्रकार से अनेक सांसारिक पदार्थों का विकास पृथिवी पर या पृथिवी के द्वारा होता है इसी प्रकार परमेश्वर के द्वारा तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के पदार्थों का विस्तार होता है। अतः विस्तार करने का सम्पूर्ण सामर्थ्य तो ईश्वर में ही है। इसलिए परमेश्वर का भी नाम पृथिवी है।

ईश्वर को साकार मानने वाले लोग अधिकांशतः यही समझते हैं कि सूर्य, चन्द्र, आचार्य, देवता, ब्रह्मा, विष्णु, शंकर ये सभी नाम अलग-अलग सत्ताओं के ही हैं। परन्तु ये नाम जहाँ लोक में मनुष्यों व जड़ पदार्थों के भी हैं, वैसे ही ये सभी नाम ईश्वर के भी हैं। जैसे- सम्पूर्ण जगत् को रच के बढ़ाता है इससे ईश्वर का नाम ब्रह्मा। सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त होने से विष्णु। सब संसार का कल्याण करने वाला होने से शंकर।

अलग-अलग नाम होने से हमें ईश्वर अनेक नहीं मानना चाहिए ये सभी नाम पृथक्-पृथक् गुणों के आधार पर हैं।

इन नामों को हम ठीक इस प्रकार से समझ सकते हैं, जैसे किसी व्यक्ति का नाम देवदत्त है, जब वह विद्यालय में पढ़ता उसमें विद्यार्जन का गुण होने से उसे विद्यार्थी, जब वह बड़ा होकर विवाहादि हो जाने पर अपनी सन्तानों का पालन करता है, पालन करने का गुण होने से पिता, भ्रातृत्व गुण होने से भाई, सेनादि में भर्ती हो जाने पर सैनिक या रक्षक परन्तु फिर भी उसका मुख्य नाम देवदत्त ही है। इसी प्रकार हमें ईश्वर के विषय में भी समझना चाहिए। ईश्वर के अनन्त गुण-कर्म-स्वभाव होने से ईश्वर के नाम भी अनन्त हैं। तो भी उसका मुख्य और निज नाम ओ३म् ही है।

आचार्य कर्मवीर व दीपक आर्य।

न्यायाधीश राजा को चाहिये कि धर्म्म से यज्ञ करने वाले सत्पुरुष पुरोहित के समान प्रजा का निरन्तर पालन करे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.१८

ऋषि के चरण पड़े यहाँ जैसे-

- आचार्य ओमदेव

शैल माला अनासागर बनाये बैठी
धरती धरातल से शशी उठाये बैठी
ऋषि के चरण पड़े यहाँ जैसे-
स्वागत में हाथ पसारे पर्वत सारे
पवन लहरों के संग हर्षित होके
पग के पथ-कण आई हो धोने जैसे-

ऋषि हृदय करुणा उमड़ी दशा देख
मिटे अविद्या जन मानस के डर से
स्थान चुना राजाओं का परोपकार की
तभी मिले ऋषि को राजा सज्जन जैसे-

परोपकारिणी सभा बनी दया के कर से
वह वट वृक्ष बन फली फल से
उग उठे बीज मिल रज़ कण से
सूरज चाँद सितारे हों लगते जैसे-

ओम् ध्वजा फहराती निशदिन
यज्ञाग्नि वशी विश्व के अङ्ग-अङ्ग
मुनि वाणी छाई स्वाहा हो के गगन
प्यासे की प्यास बुझाने बरसी हो जैसे-
वेदों के स्वर से गव्यामृत बरसे
शान्ति सौम्य चन्द्र धर्म ध्वजा से
तम हरने को व्याकुल छण-छण
ब्रह्मचारी बन किरण प्रकाश फैले हों जैसे-

ऋषि के पग बढ़ते देखे सबने
पीछे-पीछे भारत के कोने-कोने से
शिवरार्थी आये यहाँ उल्लास लिए
दया की करुणा से करुणा भरने जैसे-

- गुरुकुल सोनाखार, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

www.thearyasamaj.org

आर्यजगत् के समाचार

१.संगोष्ठी एवं वार्षिकोत्सव निमन्त्रण-पूर्व वर्षों की भाँति इस वर्ष भी स्वामी समर्पणानन्द वैदिक शोध संस्थान, गुरुकुल प्रभात आश्रम, टीकरी, भोला झाल, मेरठ (उ.प्र.) में पौष शुक्ल त्रयोदशी, वि.सं. २०७० सोमवार, तदनुसार दिनांक १३/१/२०१४ को प्रात: १० बजे वेदों के मर्मज्ञ विद्वान् पूज्य स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती जी के स्मृति-दिवस के उपलक्ष्य में 'वैदिक वाङ्मय में भूगोल' विषय पर आयोजित अखिल भारतीय शोध संगोष्ठी में शोधपत्र प्रस्तुत करने एवं चर्चा में भाग लेने हेतु आप सादर आमन्त्रित हैं। विद्वज्जनों से निवेदन है कि अग्रलिखित विषयों पर अपना शोध लेख Walkman-Chanakya-901 फॉन्ट में टङ्कित कर pavamani1986@gmail.com पर ई-मेल करें तथा टंकित एक प्रति अपने साथ लाने का कष्ट करें। आप द्वारा शोधगोष्ठी में प्रस्तुत सभी स्तरीय लेख त्रैमासिकी शोधपत्रिका 'पावमानी' में प्रकाशित किये जाते हैं।

शोधगोष्ठी में अग्रलिखित बिन्दुओं पर आप अपना शोधलेख प्रस्तुत कर सकते हैं- १. वैदिक संहिताओं में भौगोलिक-तत्त्व-विवेचन। २. वेदोक्त देशवाची शब्दों का विवेचन। ३. वेदों के देशवाचक शब्दों से वेदों में अनित्यता दोष। ४. सप्त सैन्धव प्रदेश-एक विवेचन। ५. वेदोक्त स्थलीय प्रदेशों का विवेचन। ६. वेदोक्त स्थलीय प्रकृति का स्वरूप। ७. वेदोक्त समुद्र-विवेचन। ८. वेदों में प्रकृति की संरचना। ९. वेदोक्त विविध नदीवाचक शब्दों का विवेचन। १०. वेदोक्त वनसम्पदा-विवेचन। ११. वेदों में कृषि, पशुपालन। १२. वेदों में उद्योग एवं व्यापार। १३. वेदों में आर्य, द्रविड़ एवं अन्य जन विवेचन। १४. वेदों में राजनीतिक-क्षेत्र-विवेचन। १५. ब्राह्मण ग्रन्थों में उपर्युक्त विविध भौगोलिक तथ्य-विवेचन। १६. उपनिषदों में उपर्युक्त विविध भौगोलिक तथ्य-विवेचन। १७. आरण्य ग्रन्थों में उपर्युक्त विविध भौगोलिक तथ्य-विवेचन। १८. वेदाङ्गों में उपर्युक्त विविध भौगोलिक तथ्य-विवेचन।

दिनांक १४/१/२०१४, मंगलवार को मकर सौर संक्रान्ति के पावन पर्व पर गुरुकुल का वार्षिकोत्सव अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मनाया जा रहा है, जहाँ अनेक प्रतिष्ठित विद्वानों के प्रवचन तथा भजनोपदेशकों के भजनोपदेश होंगे। दिनांक ९ जनवरी २०१४ से आरम्भ 'अथर्ववेद पारायण यज्ञ' की पूर्णाहुति तथा नवप्रविष्ट ब्रह्मचारियों का उपनयन एवं वेदारम्भ संस्कार सम्पन्न होगा तथा ब्रह्मचारियों के व्याख्यान एवं बल प्रदर्शन आदि आकर्षक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये जायेंगे। आप सभी सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं।

२. आर्यवीर शिविर सम्पन्न- नई पीढ़ी के निर्माण में कार्यरत आर्यवीर दल, गुजरात प्रतिवर्ष प्रान्तीय स्तर के शिविरों का आयोजन करता है। इस वर्ष का शीतकालीन शिविर दिनांक १० से १७ नवम्बर २०१३ तक आयोजित किया गया। आर्यसमाज गांधीनगर में आयोजित हुए इस शिविर के आवास व भोजन की जिम्मेदारी आर्यसमाज कांकरिया, अहमदाबाद ने उठाई।

इस शिविर में आर्यवीर व शाखा नायक श्रेणी का प्रशिक्षण दिया गया। शिविर में गुजरात के विभिन्न स्थानों से आये हुए १५२ आर्यवीरों ने भाग लिया। शिविरार्थियों की अनुशासित दिनचर्या सुबह ४.३० से रात्रि ९.३० तक चली। जिसमें शारीरिक, बौद्धिक व चारित्रिक प्रशिक्षण दिया गया। बौद्धिक प्रशिक्षण में स्वामी शान्तानन्द सरस्वती (गुरुकुल भवानीपर, कच्छ) व हंसमुख परमार (टंकारा) ने सेवा प्रदान की। शिविर का समापन कार्यक्रम श्री समशेर सिंह (आई.पी.एस.) डेप्युटी डायरेक्टर एन्टी करप्शन ब्यूरो गुजरात राज्य, मुख्य अतिथि की उपस्थिति में हुआ। अतिथि विशेष रहे श्री छबीलभाई (विधायक, कच्छ) व सुश्री दमयन्ती बहन बारोट (डेप्यूटी कलेक्टर, हिम्मतनगर)। इस समापन समारोह में गुजरात प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री सुरेशचन्द्र अग्रवाल ने सभी महमानों का स्वागत किया।

३. क्रियात्मक-योग शिविर सम्पन्न- वानप्रस्थ साधक आश्रम, आर्यवन, रोजड द्वारा दिनांक १० से १७ नवम्बर २०१३ तक क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया था। जिसमें देश के १२-१३ प्रान्तों से १४४ शिविरार्थियों ने भाग लिया था।

४. वेद प्रचार सम्पन्न- आर्यसमाज सेक्टर-६, भिलाई (छत्तीसगढ़) का २८ दिवसीय वेद प्रचार अभियान-२०१३ का आयोजन दो चरणों में आयोजित किया गया। प्रथम चरण श्रावणी पर्व से प्रारम्भ होकर जन्माष्टमी तक तथा द्वितीय चरण १ से २० अक्टूबर तक किया गया। इस आयोजन में भिलाई दुर्ग सिटी के विभिन्न इलाकों में पारिवारिक यज्ञ एवं सत्संग का कार्यक्रम हुआ, श्रद्धालुओं की उपस्थिति प्रशंसनीय थी। इस दौरान ख्याति प्राप्त उपदेशक आचार्य महावीर मुमुक्षु जी, मुरादाबाद से, पं. अमरसिंह, भजनोपदेशक ब्यावर राजस्थान से एवं बिजनौर उत्तर प्रदेश

www.thearyasamaj.org

से पं. भीष्म जी एवं पं. टीमकसिंह मधुर पधारे। इन्होंने अपने प्रवचनों एवं भजनों के माध्यम से वेद वाणी का प्रचार-प्रसार किया।

इस दौरान भिलाई इस्पात संयन्त्र द्वारा संचालित सियान सदन में वृद्ध जनों के लिए भी एक विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम को सफल बनाने में प्रधान श्री अवनी भूषण पुरंग तथा मन्त्री श्री रवि आर्य का निरन्तर सहयोग रहा।

५. शिविर सम्पन्न- महर्षि दयानन्द शिक्षण केन्द्र झज्जर में अक्टूबर २०१३ में आर्यसमाज एवं भारत स्वाभिमान झज्जर के संयुक्त तत्त्वावधान में ७-७ दिनों की अवधि के लिए बालिकाओं, बालकों, महिलाओं एवं पुरुषों का चरित्र निर्माण शिविरों का आयोजन २८ दिनों तक चला। योग शिक्षक श्री रामनिवास, डॉ. राजेश बंसल, सुबेदार भरतसिंह एवं महिला पतंजलि योग समिति जिला झज्जर की अध्यक्षा श्रीमती शर्मिला ने प्रशिक्षण प्रदान किया। आर्यसमाज झज्जर के उपप्रधान महाशय रतीराम आर्य एवं महर्षि दयानन्द शिक्षण केन्द्र झज्जर की श्रीमती मामकौर देवी के संयोजकत्व में प्रशिक्षण चला।

६. शिविर का आयोजन- १४ अक्टूबर को विजय दशमी के उपलक्ष्य में एक दिवसीय आर्यवीर दल प्रशिक्षण शिविर का आयोजन आर्यसमाज मन्दिर यमलार्जुनपुर के प्रांगण में हुआ। जिसमें केसरगंज क्षेत्र के ५० आर्य वीरों ने भाग लिया। शिविर का प्रारम्भ प्रात:कालीन मन्त्र के पाठ से प्रारम्भ हुआ, फिर ध्वजारोहण व आर्यसमाज के प्रधान श्री धर्मवीर आर्य के द्वारा हुआ, ध्वज गान राष्ट्रगान के पश्चात् आर्यवीरों को आसन, व्यायाम, प्राणायाम, मल्लयुद्ध, लाठी, धनुष बाण आदि प्रशिक्षण प्रदान किया गया।

७. निर्धनों को वस्त्र वितरण- जिला आर्य प्रतिनिधि सभा, कोटा द्वारा ५ अक्टूबर को किशोरपुरा स्थित गोविन्द धाम परिसर में कच्ची बस्ती के बच्चों को वस्त्र वितरित किए गए। इन वस्त्रों को पाकर कच्ची टापरियों, झोंपड़ियाँ बनाकर रह रहे निर्धन परिवारों के बच्चे, महिलाएँ, पुरुषों के चेहरों पर बेहद खुशी छा गई।

८. अभिनन्दन- आर्यसमाज रावतभाटा के ४७वें वार्षिकोत्सव के अवसर पर १३ अक्टूबर २०१३ को आर्यसमाज रावतभाटा तथा विभिन्न संस्थाओं के संयुक्त तत्त्वावधान में जिला आर्य प्रतिनिधि सभा कोटा के प्रधान श्री अर्जुनदेव चड्ढा को 'आर्य सेवाश्री सम्मान' से सम्मानित किया गया।

९. शिष्टाचार भेंट- आर्यसमाज जिला सभा कोटा के एक शिष्ट मण्डल ने जिला प्रधान अर्जुन देव चड्ढा की अगुवाई में राजस्थान के लोकायुक्त श्री एस.एस. कोठारी से सर्किट हाउस में शिष्टाचार भेंट की। आर्यसमाज के शिष्ट मण्डल में कैलाश बाहेती, हरिदत्त शर्मा, डॉ. के.एल. दिवाकर, डी.ए.वी. स्कूल की प्राचार्या श्रीमती सरिता रंजन गौतम, धर्म शिक्षक शोभाराम आर्य, जे.एस. दुबे, रामकृष्ण बल्दुआ, रामदेव शर्मा, प्रभूसिंह कुशवाह, ओमदत्त गुप्ता, अजय सूद, रामप्रसाद याज्ञिक आदि मौजूद थे।

१०. पुरस्कार समारोह सम्पन्न- १० नवम्बर २०१३ को सायं ४ बजे इलाहाबाद संग्रहालय में प्रबुद्ध नर-नारियों से खचाखच भरे सभागार में माननीय न्यायमूर्ति श्री सुनील अम्बानी द्वारा सन्दीपनि वेद विद्या प्रतिष्ठान के सचिव श्री पं. रूपकिशोर शास्त्री, उज्जैन तथा डॉ. रमेश दत्त मित्र, फैजाबाद को तुमुल हर्षध्वनि के बीच गंगाप्रसाद उपाध्याय पुरस्कार से सम्मानित किया। आपने दोनों विद्वानों को प्रशस्ति पत्र, ११०००/- रुपये तथा अंगवस्त्रम् से अलंकृत किया।

११. दीवारों से बाहर साप्ताहिक सत्संग- नगर के आर्यसमाज, जयपुर दक्षिण ने दीवारों से निकल कर साप्ताहिक सत्संग और पर्व, निकटवर्ती बस्तियों में करने की पहल की है। महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस पर न्यू सांगानेर रोड स्थित कटेवानगर, राजीव नगर, कच्ची बस्ती के हनुमान मन्दिर में यज्ञ, भजन व प्रवचन के माध्यम से समारोह आयोजित हुआ। अवसर विशेष पर सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् के प्रदेशाध्यक्ष यशपाल यश ने स्वामी दयानन्द को सर्वांगिण सुधारक और दलितों का मसीहा परिभाषित किया। यह समारोह स्थल सर्वहारा व दलित वर्ग के मध्य स्थित है जहाँ आर्यसमाज के दलितोद्धार कार्यक्रम का अनुकूल सन्देश गया।

१२. यज्ञ सम्पन्न- २४/११/२०१३ को आर्यसमाज इन्दिरापुरम, गाजियाबाद द्वारा आयोजित विश्वशान्ति एवं पर्यावरण शुद्धि महायज्ञ दोपहर २ से ५.३० बजे तक पार्क व्यू अपार्टमेन्ट, मंगल बाजार चौक, ज्ञान खण्ड-४, गंगा वाटर प्लांट, इन्दिरापुरम्, गाजियाबाद में डॉ. जयेन्द्र कुमार आचार्य, आर्ष गुरुकुल नोएडा के ब्रह्मत्व में धूमधाम से सम्पन्न हो गया। वेद पाठ डॉ. सविता सोम्या आचार्या एवं गरुकुल की ब्रह्मचारिणियों द्वारा किया गया।

१३. यज्ञ अभियान- २६ नवम्बर २०१३ को सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद्, राजस्थान द्वारा युवाओं के व्यक्तित्व विकास एवं भारतीय संस्कृति से रूबरू करने हेतु शिक्षण संस्थाओं व छात्रावासों में मानव कल्याण यज्ञ

www.thearyasamaj.org

अभियान चलाया है। परिषद् प्रदेशाध्यक्ष यशपाल यश ने राजस्थान विश्वविद्यालय में डब्ल्यू.एच.एस. छात्रावास, केसर इन्टरनेशनल स्कूल, सैनी नर्सिंग कॉलेज के छात्रावास भवन में यज्ञ कराया।

१४. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज नखा पीताम्बरपुर का २३वाँ वार्षिकोत्सव तथा वार्षिक वेद प्रचार का कार्यक्रम दिनांक २१ से २३ अक्टूबर २०१३ तक बड़े उत्साहमय वातावरण में सम्पन्न हुआ जिसमें प्रात: ८ से ११ बजे तक वेद पारायण यज्ञ एवं उपदेश, अपराह्ण ३ से ५ बजे तक विविध सम्मेलन एवं बाह्य वेद प्रचार तथा रात्रि में ७ से १०.३० बजे तक भजन, उपदेश एवं व्याख्यान का कार्यक्रम था। इस कार्यक्रम में आर्यजगत् के प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य शिवदत्त पाण्डेय, वेद वेदाङ्ग गुरुकुल विद्यापीठ धनपत गंज, सुल्तानपुर गुरुकुल के ब्रह्मचारियो एवं आचार्य राजेन्द्र कुमार शास्त्री के साथ उपस्थित थे। पूर्वाञ्चल के प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री त्रियुगीनारायण पाठक, श्रीमती सीता देवी आर्या मुरादाबाद एवं रामनारायण सैनी टाण्डा एवं सन्तु कुमार कलकत्ता ने कार्यक्रम में भाग लिया।

१५. विविध कार्यक्रम- आर्यसमाज कांसा के तत्त्वावधान में प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, छत्तीसगढ़ एवं आर्यसमाज बघौद व आर्यसमाज कोटमी के संयुक्त प्रयास से २६ अक्टूबर से १ नवम्बर २०१३ तक कांसा गाँव में आर्यवीर दल शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में १३ गाँवों से ८५ बच्चों ने भाग लिया। शिविर पूर्ण रूपेण आवासीय था। जिसमें आचार्य शैल जी (प्रधान व्यायाम शिक्षक, छ.ग.) आ. सुरेश जी, कीर्तिपाल सिंह जी एवं भुवेनश्वर जी ने शारीरिक प्रशिक्षण दिया। वहीं आचार्य सत्यव्रत जी (आर्ष गुरुकुल, सुन्दरपुर, रोहतक, हरियाणा) व आचार्य अंशुदेव जी (प्रधान प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, छ.ग.) ने वैदिक सिद्धान्तों का परिज्ञान कराया। २ नवम्बर को आचार्य रणवीर जी के ज्येष्ठ भ्राता श्री महावीर प्रसाद जी के दोनों बच्चों (सुमेधा-१०, अमर्त्य-४) का कर्ण-भेद संस्कार हुआ। ३ नवम्बर को २० यजमान परिवारों के साथ नवसस्येष्टि यज्ञ सम्पन्न हुआ एवं आर्यसमाज कांसा के भवन का शिलान्यास का कार्य सम्पन्न हुआ।

१६. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- राष्ट्रवीर एवं आर्य नेता देशभक्त लाला लाजपतराय जी द्वारा सन् १८८६ ई. संस्थापित ऐतिहासिक आर्यसमाज लाला लाजपतराय चौक, नागौरी गेट, हिसार (हरियाणा) का १२७वाँ वार्षिकोत्सव बहुत ही सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। ११ से १७ नवम्बर २०१३ तक चलने वाले इस उत्सव का आरम्भ नगर में विशाल शोभा यात्रा से हुआ। उत्सव में स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रवचन, सुश्री अंजलि आर्या एवं श्री सहदेव बेधड़क जी के भजन हुए। उत्सव में सत्यार्थप्रकाश सम्मेलन, राष्ट्र रक्षा सम्मेलन, लाला लाजपतराय जी के बलिदान दिवस १७ नवम्बर को कवि सम्मेलन, महिला सम्मेलन का आयोजन किया।

चुनाव-समाचार

१७. आर्यसमाज मन्दिर फेज़-६, मोहाली

प्रधान- श्री निरेन्द्र गुप्ता, **मन्त्री** - श्री विजय आर्य तथा श्री कौडा, **कोषाध्यक्ष-** श्री राजेन्द्र गुप्ता।

शोक समाचार

१८. परोपकारिणी सभा के उपप्रधान एवं कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री रामगोपाल गर्ग के सुपुत्र श्री पंकज गर्ग की धर्मपत्नी श्रीमती अलका गर्ग का २३ नवम्बर २०१३ को कोलकाता में निधन हो गया। वे गत कुछ समय से रक्त केंसर रोग से पीड़ित थीं।

श्रीमती अलका गर्ग की अन्त्येष्टि पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न की गई। परोपकारिणी सभा के समस्त सदस्य एवं परोपकारी परिवार दिवंगत आत्मा की सद्गति एवं शान्ति की कामना करते हैं। परिवार के लिए संवेदना प्रकट करते हैं, परमेश्वर से सभी के लिए धैर्य प्रदान करने की प्रार्थना करते हैं।

१९. श्रीमती शुलभ रस्तोगी पुत्री स्व. श्री द्वारिका प्रसाद रस्तोगी सराय आकिल जनपद कौशाम्बी निवासी दि. ८ अक्टूबर २०१३ को सायं ८.३० बजे (सिंगापुर समयानुसार) वह पंचतत्त्वों में विलीन हो गईं। सिंगापुर से कायमगंज उनके पार्थिव शरीर को लाया गया। कायमगंज से फर्रूखाबद पहुँच कर घटियाघाट पर उनका अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति के अनुसार कर दिया गया।

२०. आर्यसमाज मन्दसौर के कर्मठ, जुझारू एवं ऋषि भक्त श्री ठाकुर नरेन्द्रसिंह आत्मज जशवन्त सिंह तोमर का ६६ वर्ष १० माह की आयु में लम्बी बिमारी के बाद दिनांक ६/११/२०१३ को देहावसान हो गया। आपकी अन्त्येष्टि वैदिक रीति से की गई जिसमें नगर के गणमान्य नागरिकों ने भाग लिया व श्रद्धाञ्जलि दी।

वे ही लोग पूर्ण योगी और सिद्ध हो सकते हैं कि योगविद्याभ्यास करके ईश्वर से लेके पृथिवी पर्य्यन्त पदार्थों को साक्षात् करने का यत्न किया करते हैं।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.८

www.thearyasamaj.org

ऋषि मेला २०१३ की झलकियाँ

www.thearyasamaj.org

आर जे/ए जे/80/2013-2014 तक प्रेषण : १५ दिसम्बर , २०१३ RNI. NO. ३९५९/५९

झलकियाँ

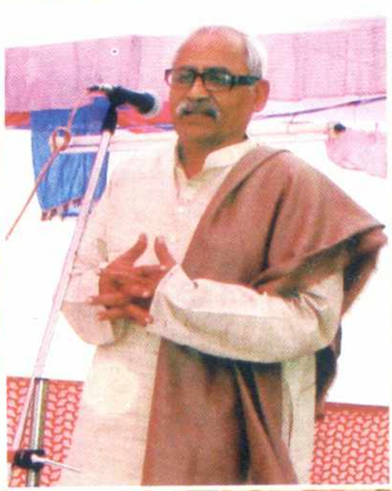

प्रेषकः

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर

(राजस्थान) - ३०५००१